MATS LAW SCHOOL (MLS)
MATS UNIVERSITY, RAIPUR

CLASS NOTES

Subject: Law of Tort
Year: 2024
Class: LL.B First Year

Prepared by:
Asst. Prof. Ashish Jadhav
MLS, MATS University

TORTS

Basis	**Torts (टॉर्ट्स)**	**Crime (अपराध)**
Definition (परिभाषा)	A tort is a civil wrong that causes harm or loss to an individual, leading to legal liability. (टॉर्ट्स एक नागरिक गलत है जो किसी व्यक्ति को हानि या नुकसान पहुंचाता है, जिससे कानूनी दायित्व उत्पन्न होता है।)	A crime is an act or omission that violates a law and is punishable by the state. (अपराध एक ऐसा कार्य या चूक है जो कानून का उल्लंघन करता है और राज्य द्वारा दंडनीय है।)
Objective (उद्देश्य)	To compensate the victim for the harm caused. (पीड़ित को हुई क्षति के लिए मुआवजा देना।)	To punish the offender and maintain public order. (अपराधी को दंडित करना और सार्वजनिक व्यवस्था बनाए रखना।)
Nature of Action (कार्रवाई की प्रकृति)	Civil action initiated by the injured party (plaintiff). (क्षतिग्रस्त पक्ष द्वारा नागरिक कार्रवाई शुरू की जाती है।)	Criminal action initiated by the state against the offender (defendant). (राज्य द्वारा अपराधी के खिलाफ आपराधिक कार्रवाई शुरू की जाती है।)

Burden of Proof (साक्ष्य का भार)	On the balance of probabilities. (संभावनाओं के संतुलन पर आधारित।)	Beyond a reasonable doubt. (उचित संदेह से परे।)
Examples (उदाहरण)	Negligence, defamation, trespass. (लापरवाही, मानहानि, अतिक्रमण।)	Theft, murder, assault. (चोरी, हत्या, हमला।)
Remedies (उपचार)	Damages, injunction. (क्षतिपूर्ति, निषेधाज्ञा।)	Imprisonment, fine, community service. (कारावास, जुर्माना, सामुदायिक सेवा।)
Case Law (न्यायिक दृष्टांत)	India: Ashby v. White (1703) Tort of wrongful exclusion from voting. (भारत: अश्बी बनाम व्हाइट (1703) मतदान से गलत तरीके से बाहर करने का टॉर्ट।)	KM Nanavati v State of MH
England: Donoghue v. Stevenson (1932) Established the modern concept of negligence. (इंग्लैंड: डोनोग्यू बनाम स्टीवेन्सन (1932) आधुनिक लापरवाही की अवधारणा स्थापित की।)	India: K.M. Nanavati v. State of Maharashtra (1961) Conviction for murder. (भारत: के.एम. नानावती बनाम महाराष्ट्र राज्य (1961) हत्या के लिए दोषसिद्धि।)	
England: R v. Dudley and Stephens (1884) Case on necessity and murder. (इंग्लैंड: आर बनाम डडली और स्टीफेंस (1884) आवश्यकता और हत्या का मामला।)		

Connection to Present Laws (वर्तमान कानूनों से संबंध)	In India, tort law is uncodified but follows principles similar to those in English law. (भारत में, टॉर्ट कानून संहिताबद्ध नहीं है, लेकिन यह अंग्रेजी कानून में समान सिद्धांतों का पालन करता है।)	Sections 299377 of the Indian Penal Code (IPC) deal with various crimes like culpable homicide, murder, theft, etc. (भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) की धारा 299377 विभिन्न अपराधों जैसे दोषी हत्या, हत्या, चोरी आदि से संबंधित है।)
Basis	**Torts (टॉर्ट्स)**	**Contract (संविदा)**
Definition (परिभाषा)	A tort is a civil wrong that causes harm or loss to an individual, leading to legal liability. (टॉर्ट्स एक नागरिक गलत है जो किसी व्यक्ति को हानि या नुकसान पहुंचाता है, जिससे कानूनी दायित्व उत्पन्न होता है।)	A contract is an agreement between two or more parties that is enforceable by law. (संविदा दो या दो से अधिक पक्षों के बीच एक समझौता है जो कानून द्वारा लागू किया जा सकता है।)
Objective (उद्देश्य)	To compensate the victim for harm caused by a wrongful act. (गलत कार्य से हुए नुकसान के लिए पीड़ित को मुआवजा देना।)	To fulfill the obligations created by an agreement between the parties. (पक्षों के बीच हुए समझौते से उत्पन्न दायित्वों को पूरा करना।)
Nature of Action (कार्रवाई की प्रकृति)	Civil action for compensation due to breach of duty imposed by law. (कानून द्वारा लगाए गए कर्तव्य के उल्लंघन के कारण मुआवजे के लिए नागरिक कार्रवाई।)	Civil action for enforcement of terms agreed upon by the parties. (पक्षों द्वारा सहमत शर्तों को लागू करने के लिए नागरिक कार्रवाई।)

Formation (गठन)	No agreement is necessary; the duty is imposed by law. (कोई समझौता आवश्यक नहीं है; कर्तव्य कानून द्वारा लगाया जाता है।)	Requires a valid offer, acceptance, and consideration. (एक वैध प्रस्ताव, स्वीकृति और विचार की आवश्यकता है।)
Examples (उदाहरण)	Negligence, defamation, nuisance. (लापरवाही, मानहानि, उपद्रव।)	Sale agreements, employment contracts, lease agreements. (बिक्री समझौते, रोजगार अनुबंध, पट्टा समझौते।)
Remedies (उपचार)	Damages, injunction. (क्षतिपूर्ति, निषेधाज्ञा।)	Damages, specific performance, rescission. (क्षतिपूर्ति, विशिष्ट प्रदर्शन, रद्दीकरण।)
Case Law (न्यायिक दृष्टांत)	India: Bhim Singh v. State of J&K (1985) Tort of wrongful detention. (भारत: भीम सिंह बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य (1985) गलत तरीके से हिरासत में लेने का टॉर्ट।)	
England: Rylands v. Fletcher (1868) Strict liability in torts. (इंग्लैंड: राइलैंड्स बनाम फ्लेचर (1868) टॉर्ट्स में सख्त जिम्मेदारी।)	India: Hadley v. Baxendale (1854) Rule on consequential damages in contract law. (भारत: हैडली बनाम बक्सनडेल (1854) अनुबंध कानून में परिणामस्वरूप क्षति पर नियम।)	
England: Carlill v. Carbolic Smoke Ball Co (1893) Landmark contract law case. (इंग्लैंड: कारलिल बनाम कार्बोलिक स्मोक बॉल कंपनी (1893) मील का पत्थर अनुबंध कानून का मामला।)		
Connection to Present Laws (वर्तमान कानूनों से संबंध)	Indian Contract Act, 1872 governs contracts in India. Section 73 deals with compensation for breach of	

	contract, connecting it with tort principles where damages are assessed. (भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 भारत में अनुबंधों को नियंत्रित करता है। अनुबंध के उल्लंघन के लिए मुआवजे से संबंधित धारा 73, जिसमें नुकसान का आकलन किया जाता है, टॉर्ट सिद्धांतों से जुड़ी है।)	

Basis	Torts	Quasi Contract
Definition (परिभाषा)	A tort is a civil wrong that causes harm or loss to an individual, leading to legal liability. (टॉर्ट्स एक नागरिक गलत है जो किसी व्यक्ति को हानि या नुकसान पहुंचाता है, जिससे कानूनी दायित्व उत्पन्न होता है।)	A Quasi Contract is an obligation imposed by law, not based on an agreement, to prevent unjust enrichment. (क्वासी संविदा एक ऐसा दायित्व है जो कानून द्वारा लगाया जाता है, जो अनुबंध पर आधारित नहीं होता, लेकिन अनुचित लाभ से बचने के लिए होता है।)
Objective (उद्देश्य)	To compensate the victim for the harm caused. (पीड़ित को हुई क्षति के लिए मुआवजा देना।)	To prevent one party from being unjustly enriched at the expense of another. (एक पक्ष को दूसरे की हानि पर अनुचित रूप से समृद्ध होने से रोकने के लिए।)

Formation (गठन)	No agreement is necessary; the duty is imposed by law. (कोई समझौता आवश्यक नहीं है; कर्तव्य कानून द्वारा लगाया जाता है।)	Not formed by an agreement but imposed by law to rectify injustice. (समझौते द्वारा नहीं बल्कि अन्याय को सुधारने के लिए कानून द्वारा लगाया जाता है।)
Nature of Action (कार्रवाई की प्रकृति)	Civil action initiated by the injured party (plaintiff). (क्षतिग्रस्त पक्ष द्वारा नागरिक कार्रवाई शुरू की जाती है।)	Civil action based on an obligation imposed by law. (कानून द्वारा लगाए गए दायित्व के आधार पर नागरिक कार्रवाई।)
Burden of Proof (साक्ष्य का भार)	On the balance of probabilities. (संभावनाओं के संतुलन पर आधारित।)	On the balance of probabilities. (संभावनाओं के संतुलन पर आधारित।)
Examples (उदाहरण)	Negligence, defamation, trespass. (लापरवाही, मानहानि, अतिक्रमण।)	Payment made by mistake, recovery of money paid under a void contract. (गलती से किया गया भुगतान, शून्य संविदा के तहत किए गए धन की वसूली।)
Remedies (उपचार)	Damages, injunction. (क्षतिपूर्ति, निषेधाज्ञा।)	Restitution or compensation to prevent unjust enrichment. (अनुचित लाभ से बचने के लिए प्रतिकर या मुआवजा।)
Case Law (न्यायिक दृष्टांत)	India: Ashby v. White (1703) Tort of wrongful exclusion from voting. (भारत: अश्बी बनाम व्हाइट (1703) मतदान से गलत तरीके से बाहर करने का टॉर्ट।) England: Donoghue v. Stevenson (1932) Established the modern concept of negligence. (इंग्लैंड: डोनोग्यू बनाम स्टीवेंसन (1932) आधुनिक लापरवाही की अवधारणा स्थापित की।)	India: Sindhi Education Society v. Chief Secretary, Government of NCT of Delhi (2010) Quasi Contract for refund of excess fee. (भारत: सिंधी शिक्षा सोसायटी बनाम मुख्य सचिव, दिल्ली एनसीटी सरकार (2010) अतिरिक्त शुल्क की वापसी के लिए क्वासीसंविदा।) England: Moses v. Macferlan (1760) Case on Quasi Contract for money paid by mistake. (इंग्लैंड: मोसेस बनाम मैकफर्लन (1760) गलती से किए गए भुगतान के लिए क्वासीसंविदा पर मामला।)

Illustration (चित्रण)	A person accidentally damages someone else's property by being negligent. (एक व्यक्ति की लापरवाही से किसी अन्य की संपत्ति को नुकसान पहुंचता है।)	A person receives money by mistake and is legally bound to return it. (एक व्यक्ति गलती से पैसा प्राप्त करता है और उसे वापस करने के लिए कानूनी रूप से बाध्य है।)

Quasi Contract what is it?

Quasi Contract is a commitment imposed by operation of law upon one of the parties for the purpose of avoiding an unjust benefit, although such commitment does not arise in fact between such parties. Quasi Contract emanates not from the consent of the parties but is the creation of law designed to attain equity and justice. It is essentially applied with an objective of stopping a party from being unjustly enriched at the expense of another.

Quasi Contracts are dealt with within Sections 68 to 72 under the Indian Contract Act, 1872. These sections delineate those conditions whereby, even though there is no contract, the obligation made brings the case within the ambit of the law of contracts.

Key Sections of Quasi Contracts under the Indian Contract Act, 1872:

1. Section 68: Claim for necessaries supplied to a person incapable of contracting or to someone dependent on him.
2. Section 69: Repayment of a person who is interested in the payment of money that another person is bound by law to pay.
3. Section 70: Liability of a person who is enjoying the benefit of a nongratuitous act.
4. Section 71: Liability of a finder of goods.
5. Section 72: Liability of a person to whom money is paid or anything delivered by mistake or under coercion.

Examples of Quasi Contracts:

1. Section 68: Necessaries Supplied

Illustration: A has supplied B with necessaries, suitable to his condition in life. B is incapable of paying for them. A is entitled to be reimbursed for the things supplied to B.

Case Law: In Gajanan Moreshwar v. Moreshwar Madan Mantri, the court allowed reimbursement for necessaries supplied to a minor.

2. Section 70: NonGratuitous Acts

Example: If A delivers goods to B under a mistake and B accepts the goods delivered, B is, therefore, bound to return the goods so received or pay for the same.

Case: In State of West Bengal v. B.K. Mondal & Sons, it is held that the government is bound to pay for the benefits enjoyed though there was no formal contract.

3. Section 72: Payment by Mistake

Illustration: A pays money to B in mistake believing B to be his debtor. B must restore the money.

Case Law: In Chandiram v. Keshavlal, it was held that money received under mistake was covered by Section 72.

CONCLUSION

Quasi Contracts and torts are different concepts under the law. In Quasi Contracts, there is an obligation without any express or implied contract, which exists to avoid unjust enrichment. On the other hand, torts consist of civil wrongs where the infliction of damages must be compensated. Quasi Contracts ensure justice in the area where the rule of law itself inflicts obligation, even in the absence of a contract, while tort refers to some wrong committed by one party against another.

Case Name	Parties Involved	Facts	Legal Issues	Judgment	Implications
Ashby v. White (1703)	Plaintiff: Matthew Ashby Defendant: William White	Plaintiff was wrongfully prevented from voting by the defendant, who was a returning officer.	Whether preventing someone from voting constitutes a tort.	The court ruled in favor of Ashby, establishing that wrongful exclusion from voting is actionable under tort law.	This case is foundational in tort law, establishing the principle that even minor violations of rights are actionable.

K.M. Nanavati v. State of Maharashtra (1961)	Appellant: K.M. Nanavati Respondent: State of Maharashtra	Nanavati, a naval officer, shot his wife's lover, leading to a highprofile criminal case.	Whether the act of killing was murder or culpable homicide not amounting to murder.	The court convicted Nanavati of murder, rejecting the plea of sudden provocation.	This case highlighted the distinction between murder and culpable homicide under Sections 299 and 300 of the IPC. It also led to the abolition of the jury system in India.
Donoghue v. Stevenson (1932)	Plaintiff: Mrs. Donoghue Defendant: David Stevenson	Mrs. Donoghue consumed ginger beer containing a decomposed snail, leading to her illness.	Whether a manufacturer owes a duty of care to the ultimate consumer in the absence of a contract.	The court ruled in favor of Donoghue, establishing the modern concept of negligence and the "neighbor principle."	This landmark case established the duty of care in negligence and shaped the modern law of torts, influencing legal systems globally.
Carlill v. Carbolic Smoke Ball Co. (1893)	Plaintiff: Mrs. Carlill Defendant: Carbolic Smoke Ball Co.	The defendant company advertised that it would pay £100 to anyone who contracted influenza after using its product, which Mrs. Carlill did.	Whether the advertisement constituted a binding contract and whether Mrs. Carlill fulfilled the conditions of the offer.	The court ruled in favor of Carlill, holding that the advertisement was a unilateral offer, and Mrs. Carlill's actions constituted acceptance.	This case is significant in contract law as it established the principles of unilateral contracts and the requirements for acceptance of an offer.
Rylands v. Fletcher (1868)	Plaintiff: Thomas Fletcher Defendant: John Rylands	Defendant's reservoir burst, causing water to flood the plaintiff's coal mine.	Whether the defendant was liable for damage caused by a nonnatural use of land.	The court ruled in favor of Fletcher, establishing the principle of strict liability in tort law.	This case introduced the rule of strict liability, where a party can be held liable for harm caused by inherently dangerous activities, even without fault.

Bhim Singh v. State of J&K (1985)	Petitioner: Bhim Singh Respondent: State of J&K	Bhim Singh, a legislator, was wrongfully detained by the police, preventing him from attending an Assembly session.	Whether wrongful detention without due process constitutes a violation of fundamental rights.	The Supreme Court awarded Bhim Singh compensation for illegal detention, emphasizing the protection of personal liberty under Article 21.	This case reinforced the protection of fundamental rights and the accountability of the state for violations under tort law, especially in cases of wrongful detention.
MC Mehta v. Union of India (1987)	Petitioner: MC Mehta Respondent: Union of India	A gas leak from a chemical plant caused widespread harm, leading to claims for environmental damages.	Whether the principle of absolute liability applies to hazardous industries in India.	The Supreme Court ruled in favor of Mehta, establishing the principle of absolute liability for industries engaged in hazardous activities.	This case is pivotal in environmental law, expanding the scope of liability beyond strict liability, holding industries absolutely liable for any harm caused by their operations.
Hadley v. Baxendale (1854)	Plaintiff: Hadley Defendant: Baxendale	A miller sued for damages after a delay in delivering a broken mill shaft, causing the mill to shut down.	Whether the defendant was liable for consequential damages due to the delay in delivery.	The court ruled in favor of Baxendale, limiting liability to damages that were reasonably foreseeable at the time of contract formation.	This case established the principle of foreseeability in contract law, where damages are only recoverable if they were reasonably foreseeable by both parties at the time the contract was made.

State of West Bengal v. B.K. Mondal & Sons (1962)	Plaintiff: State of West Bengal Defendant: B.K. Mondal & Sons	The defendant provided construction services without a formal contract, and the state benefited from the services but refused to pay.	Whether the state was obligated to pay for services received without a formal contract, under Quasi Contract principles.	The court ruled in favor of the defendant, holding that the state was liable to pay for the benefits received under Section 70 of the Indian Contract Act.	This case is significant in Quasi Contract law, emphasizing the principle that a party must compensate another for benefits received even in the absence of a formal agreement, preventing unjust enrichment.
Fibrosa Spolka Akcyjna v. Fairbairn Lawson Combe Barbour Ltd (1943)	Plaintiff: Fibrosa Spolka Akcyjna Defendant: Fairbairn Lawson Combe Barbour Ltd	The plaintiff paid for machinery to be delivered, but due to the outbreak of war, the contract became impossible to perform.	Whether the plaintiff could recover the advance payment made under a contract that became impossible to perform.	The court ruled in favor of Fibrosa, allowing the recovery of payments made under a contract that was frustrated due to impossibility.	This case is a landmark in the law of Quasi Contracts, establishing the right to recover payments made under a contract that becomes impossible to perform due to unforeseen circumstances, under the doctrine of frustration.
Scott v. Shepherd (1773)	Plaintiff: Scott Defendant: Shepherd	The defendant threw a lighted squib into a market, which caused injury to the plaintiff after it was thrown by others to avoid harm.	Whether the defendant was liable for the injuries caused, considering the chain of causation.	The court ruled in favor of Scott, holding the defendant liable for the injuries as the original wrongful act set in motion the chain of events.	This case is critical in tort law for understanding the concept of proximate cause and the responsibility for the foreseeable consequences of one's actions, even if intermediaries are involved.

STRICT V ABSOLUTE LIABILITY

Aspect (पहलू) Detailed Study	Strict Liability (सख्त दायित्व)	Absolute Liability (पूर्ण दायित्व)
Definition (परिभाषा)	Liability imposed without fault, but with certain exceptions. The defendant is liable for damages caused by hazardous activities regardless of negligence, but defenses are available. (बिना दोष के दायित्व लागू किया जाता है, लेकिन कुछ अपवादों के साथ। प्रतिवादी को खतरनाक गतिविधियों से होने वाले नुकसान के लिए उत्तरदायी ठहराया जाता है, भले ही लापरवाही हो, लेकिन बचाव उपलब्ध होते हैं।)	Liability imposed without fault, with no exceptions or defenses available. The defendant is absolutely liable for any harm caused by their activities. (बिना दोष के दायित्व लागू किया जाता है, जिसमें कोई अपवाद या बचाव उपलब्ध नहीं होते। प्रतिवादी को उनकी गतिविधियों से होने वाले किसी भी नुकसान के लिए पूरी तरह उत्तरदायी ठहराया जाता है।)
Origin (उत्पत्ति)	Derived from the English case of Rylands v. Fletcher (1868), adopted into Indian law. (Rylands v. Fletcher (1868) के अंग्रेजी मामले से लिया गया, जिसे भारतीय कानून में अपनाया गया।)	Developed by the Supreme Court of India in the landmark case of MC Mehta v. Union of India (1987). Oleum Gas Leak Case. (भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा MC Mehta v. Union of India (1987) के ऐतिहासिक मामले में विकसित किया गया।)
Nature of Liability (दायित्व की प्रकृति)	Relative: Defendants can avoid liability by proving they took all reasonable precautions to prevent harm. (सापेक्ष: प्रतिवादी यह साबित करके दायित्व से बच सकते हैं कि उन्होंने नुकसान को रोकने के लिए सभी उचित एहतियातें बरती थीं।)	Absolute: No defenses or exceptions; liability is automatic irrespective of precautions taken. (पूर्ण: कोई बचाव या अपवाद नहीं; एहतियात के बावजूद दायित्व स्वतः ही लागू हो जाता है।)

Scope of Application (लागू होने का दायरा)	Applies to inherently dangerous activities where harm is a foreseeable consequence. (स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधियों पर लागू होता है, जहां नुकसान की संभावना होती है।)	Applies primarily to hazardous or ultra-hazardous activities, especially those involving hazardous substances or processes. (मुख्य रूप से खतरनाक या अत्यधिक खतरनाक गतिविधियों पर लागू होता है, विशेष रूप से वे जो खतरनाक पदार्थों या प्रक्रियाओं से संबंधित होती हैं।)
Defenses Available (उपलब्ध बचाव)	Yes, defenses such as the plaintiff's own negligence or third-party fault can be invoked. (हाँ, वादी की स्वयं की लापरवाही या तृतीय पक्ष की गलती जैसे बचाव का सहारा लिया जा सकता है।)	No defenses are available; liability is imposed regardless of any precautions taken by the defendant. (कोई बचाव उपलब्ध नहीं है; प्रतिवादी द्वारा लिए गए किसी भी एहतियात के बावजूद दायित्व लागू होता है।)
Standard of Care (देखभाल का मानक)	Requires the defendant to have exercised reasonable care to prevent harm. (प्रतिवादी से यह अपेक्षित होता है कि वह नुकसान को रोकने के लिए उचित देखभाल का पालन करे।)	No standard of care is required; liability is imposed regardless of the level of care exercised. (देखभाल के किसी मानक की आवश्यकता नहीं है; दायित्व लागू होता है, चाहे जो भी देखभाल की गई हो।)
Examples/Illustrations (उदाहरण/चित्रण)	- A factory causing pollution due to negligence. (लापरवाही के कारण प्रदूषण करने वाली एक फैक्ट्री)	- A chemical plant causing accidental release of hazardous substances leading to environmental damage. (एक रासायनिक संयंत्र से आकस्मिक रूप से खतरनाक पदार्थों का निर्वहन जिससे पर्यावरणीय क्षति हो रही है) - Nuclear plant accidents. (नाभिकीय संयंत्र दुर्घटनाएँ)

Key Case Laws in India (भारत में प्रमुख मामले कानून)	- Rylands v. Fletcher (Adopted in Indian Jurisprudence) (Rylands v. Fletcher (भारतीय न्यायशास्त्र में अपनाया गया)) -Ponting v Noakes (Ref: GM Wagh Book, Hindi notes pg 20)	- MC Mehta v. Union of India (1987) – Oleum Gas Leak Case (MC Mehta v. Union of India (1987) – ओलियम गैस रिसाव मामला) - Indian Council for Enviro-Legal Action v. Union of India (1996) (भारतीय पर्यावरण-वैधानिक कार्रवाई परिषद बनाम भारत संघ (1996))
Judicial Interpretation (न्यायिक व्याख्या)	Courts may allow exemptions if the defendant can prove that they exercised all due diligence to prevent harm. (यदि प्रतिवादी यह साबित कर सके कि उन्होंने नुकसान को रोकने के लिए सभी उचित सावधानियाँ बरती थीं, तो न्यायालय अपवाद की अनुमति दे सकते हैं।)	Courts impose liability irrespective of any precautions, emphasizing the protection of public and environmental interests. (न्यायालय बिना किसी एहतियात के दायित्व लागू करते हैं, सार्वजनिक और पर्यावरणीय हितों की सुरक्षा पर जोर देते हैं।)
Policy Rationale (नीति का तर्क)	Balances the need to hold parties accountable for harm while recognizing that absolute precautions may not always be feasible. (पक्षकारों को नुकसान के लिए जिम्मेदार ठहराने की आवश्यकता को संतुलित करता है, जबकि यह मान्यता देता है कि पूर्ण एहतियातें हमेशा व्यवहार्य नहीं हो सकती हैं।)	Prioritizes the protection of human life and the environment over the interests of the defendant, ensuring maximum accountability. (प्रतिवादी के हितों पर मानव जीवन और पर्यावरण की सुरक्षा को प्राथमिकता देता है, जिससे अधिकतम जिम्मेदारी सुनिश्चित होती है।)
Impact on Industries (उद्योगों पर प्रभाव)	Industries must adhere to safety standards and can defend against liability by proving due diligence. (उद्योगों को सुरक्षा मानकों का पालन करना चाहिए और उचित परिश्रम साबित करके दायित्व के खिलाफ बचाव कर सकते हैं।)	Industries are compelled to implement the highest safety measures as they cannot escape liability, encouraging proactive risk management. (उद्योगों को उच्चतम सुरक्षा उपाय लागू करने के लिए मजबूर किया जाता है क्योंकि वे दायित्व से बच नहीं सकते, जिससे सक्रिय जोखिम प्रबंधन को प्रोत्साहन मिलता है।)

Compensation (मुआवजा)	Compensation is provided to the victim if liability is established, subject to defenses. (यदि दायित्व स्थापित होता है, तो बचाव के अधीन पीड़ित को मुआवजा प्रदान किया जाता है।)	Compensation is mandated without the need for the victim to prove negligence or fault. (पीड़ित को लापरवाही या दोष साबित करने की आवश्यकता के बिना मुआवजा अनिवार्य है।)
Comparative Summary (तुलनात्मक सारांश)		
Feature (विशेषता)	Strict Liability (सख्त दायित्व)	Absolute Liability (पूर्ण दायित्व)
Defenses (बचाव)	Available (due diligence, third-party fault) (उपलब्ध (उचित परिश्रम, तृतीय पक्ष की गलती))	Not available (उपलब्ध नहीं)
Liability Basis (दायित्व का आधार)	Fault-based but without needing to prove negligence (दोष-आधारित लेकिन लापरवाही साबित करने की आवश्यकता के बिना)	No fault required (कोई दोष की आवश्यकता नहीं)
Applicability (लागू होने का दायरा)	Inherently dangerous activities where harm is foreseeable (स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधियाँ जहां नुकसान की संभावना हो)	Ultra-hazardous activities with potential for significant harm (महत्वपूर्ण नुकसान की संभावना वाली अत्यधिक खतरनाक गतिविधियाँ)
Judicial Preference (न्यायिक प्राथमिकता)	Allows for balanced accountability with possible defenses (संभावित बचाव के साथ संतुलित जिम्मेदारी की अनुमति देता है)	Ensures maximum accountability to protect public and environmental interests (सार्वजनिक और पर्यावरणीय हितों की सुरक्षा के लिए अधिकतम जिम्मेदारी सुनिश्चित करता है)

Policy Objective (नीति का उद्देश्य)	To hold parties accountable while recognizing practical limitations (व्यावहारिक सीमाओं को मान्यता देते हुए पक्षकारों को जिम्मेदार ठहराना)	To prioritize public safety and environmental protection above all (सार्वजनिक सुरक्षा और पर्यावरणीय संरक्षण को सर्वोपरि रखना)

CASE ANALYSIS

M.C. Mehta v. Union of India (1987)
1987 AIR 1086, 1987 SCR (1) 819

Introduction

M.C. Mehta v. Union of India (1987), popularly known as the Oleum Gas Leak Case, is a landmark judgment in Indian environmental law. This case is important because it laid the foundation for the principle of absolute liability in Indian jurisprudence and replaced the traditional English doctrine of strict liability laid down in Rylands v. Fletcher. By the judgment pronounced in this case, the Supreme Court of India set new parameters with respect to hazardous industries, particularly in ensuring that such industries take all possible safety precautions in order to prevent harm to the environment and public health.

Background of the Case

Incident: The case arose out of the leakage of oleum gas from one of the units of Shriram Foods and Fertilizers Industries in Delhi in December 1985. The leakage caused the death of an advocate and injured several others who came within its reach.

Applicant: M.C. Mehta, environmentalist and public interest lawyer, came to the Supreme Court with a petition-a Public Interest Litigation Under Article 32 of the Constitution of India-finding closure and relocation of the Shriram factory that falls within a densely populated area.

Legal Issues:

1. Which of the following is an enterprise that is engaged in an inherently dangerous or hazardous activity liable for?
2. Whether the rule of strict liability as laid down in Rylands v. Fletcher applies in the Indian context or whether a new principle should be developed?

Judgment

Date of Judgment: February 20, 1987

Bench: Justice P.N. Bhagwati, Chief Justice of India; Justice R.S. Pathak; Justice G.L. Oza

Key Holdings:

1. Introduction of Absolute Liability:

While deflected from the principle of strict liability laid down in Rylands v. Fletcher, the Supreme Court evolved the doctrine of absolute liability in relation to hazardous industries. It laid down that an enterprise which is engaged in an inherently hazardous or dangerous activity fraught with the high risk of damage to others must be absolutely liable for any harm caused by such enterprise, irrespective of any reasonable care taken.

No Defenses Available: Whereas in strict liability, even an act of God, an act of a third party, or plaintiff's consent can be pleaded as a defense, no exception is provided in the case of absolute liability. The Court ruled that such industries cannot be exonerated from liability on the plea of having taken all reasonable care or that the plaintiff's injury was caused by the negligence of a third party.

2. Mitigation of Liability:

- The Court held that the quantum of compensation must be linked to the size and capacity of the undertaking and therefore, adequately substantial to prevent and fully compensate the victims.
- The decided ratio is that where an enterprise is engaged in hazardous or inherently dangerous activity, it owes a duty to the community to ensure no harm results. In case harm does occur, the enterprise must bear the cost of compensating for the same.

3. Directive for Environmental Protection:

The Supreme Court further directed the establishment of mechanisms to ensure that industries involved in hazardous activities operate in such a way so as not to pose any hazard to the environment and public health. These included recommendations for better safety measures, regular inspection, and relocation of hazardous industries away from thickly populated areas.

Legal Principles Established

1. Absolute Liability:

The Court evolved a new doctrine of absolute liability for hazardous and inherently dangerous industries beyond the strict liability principle laid down by English common law. This would ensure that such enterprises shall be made fully liable for the damage so caused by their activities, without any exception whatsoever.

2. Wider Public Interest:

- The judgment strengthened the idea of the concept of broad corporate liability not only to employees or immediate consumers of the products but also to the public in general, whenever their activities or operations threaten to cause harm to the health of a human being and the environment.

3. The Precautionary Principle:

Although the name was not mentioned, the decision upon judgment took up the precautionary principle, that has been integral to environmental law. This was a principle premised upon evidence that if an action or policy had a possibility of harming the public or the environment, the onus of the proof must lie with those proposing such a policy or action.

Implications of the Decision

1. Judicial Activism:

M.C. Mehta v. Union of India represents a leading example related to judicial activism, wherein the Supreme Court showed initiative in the interest of maintaining the cause of environmental and public health concerns. More importantly, the willingness of the Court to go beyond existing legal frameworks demonstrated its commitment to the growth of a sound environmental jurisprudence in India.

2. Impact on Environmental Law:

- This case formed a milestone in Indian environmental law and gave the necessary fillip for other judgments on environmental protection. The principle of absolute liability was then applied in several other cases relating to the environment and substantially influenced the implementation of environmental law in India.

3. Influence of Policy:

- The judgment played a role in conceptualizing environmental policies and regulations in India, with much more strict control over the industries dealing with hazardous material. Also, it became statutory mechanisms for environmental impact analysis and more stringent industrial safety standards.

Conclusion

The M.C. Mehta v. Union of India (1987) case has been considered one of the landmark judgments since it has resounding influence on the environmental law operating in India. The absolute liability principle marked a new trend in holding industries responsible for environmental damage, no matter how much care was taken. In this judgment, the greater good of public safety and protection of the environment was prioritized over and above industrial interests. This paved the way for stringent laws for the protection of the environment in India. The case has remained a milestone in environmental jurisprudence and is still cited into cases relating to industrial accidents and environmental degradation.

केस विश्लेषण: एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ **(1987)**

1987 एआईआर 1086, 1987 एससीआर (1) 819

परिचय: एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ **(1987)**, जिसे आमतौर पर ओलियम गैस रिसाव मामला के नाम से जाना जाता है, भारतीय पर्यावरण कानून में एक ऐतिहासिक निर्णय है। यह मामला इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि इसने भारतीय न्यायशास्त्र में पूर्ण दायित्व **(Absolute Liability)** के सिद्धांत की नींव रखी और **Rylands v. Fletcher** में स्थापित पारंपरिक अंग्रेजी सख्त दायित्व **(Strict Liability)** के सिद्धांत को प्रतिस्थापित किया। इस मामले में दिए गए निर्णय के द्वारा, भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने खतरनाक उद्योगों के संबंध में नए मापदंड स्थापित किए, खासकर यह सुनिश्चित करने के लिए कि ऐसे उद्योग पर्यावरण और सार्वजनिक स्वास्थ्य को नुकसान से बचाने के लिए सभी संभावित सुरक्षा उपाय अपनाएं।

पृष्ठभूमि: केस के तथ्य

दिसंबर 1985 में दिल्ली स्थित श्रीराम फूड्स एंड फर्टिलाइजर्स इंडस्ट्रीज की एक इकाई से ओलियम गैस के रिसाव से उत्पन्न हुआ था। इस रिसाव के कारण एक वकील की मृत्यु हो गई और कई अन्य लोग घायल हो गए।

याचिकाकर्ता: एम.सी. मेहता, एक पर्यावरणविद और जनहित वकील, ने संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत एक जनहित याचिका के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया, जिसमें श्रीराम फैक्ट्री की बंदी और पुनःस्थापन की मांग की गई जो एक घनी आबादी वाले क्षेत्र में स्थित थी।

विधिवत प्रश्न:

1. एक ऐसा उद्यम जो स्वाभाविक रूप से खतरनाक या जोखिमयुक्त गतिविधियों में संलग्न है, वह किस हद तक उत्तरदायी है?

2. क्या Rylands विरुद्ध Fletcher में कहीं निर्धारित सख्त दायित्व का सिद्धांत भारतीय परिप्रेक्ष्य में適用 है या एक नया सिद्धांत विकसित किया जाना चाहिए?

DECISION

DATE OF DECISION: 20 फरवरी, 1987

BENCH: के चीफ जस्टिस पी.एन. भगवती; जस्टिस आर.एस. पाठक; जस्टिस जे.एल. ओजा

मुख्य निष्कर्ष**:**

1. पूर्ण दायित्व का परिचय*:*
जबकि Rylands v. Fletcher में स्थापित सख्त दायित्व के सिद्धांत से हटते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने खतरनाक उद्योगों के संबंध में पूर्ण दायित्व (Absolute Liability) के सिद्धांत को विकसित किया। इसने यह निर्णय दिया कि एक उद्यम जो स्वाभाविक रूप से खतरनाक या जोखिमयुक्त गतिविधियों में संलग्न है, और जिसके कारण अन्य लोगों को नुकसान होने का उच्च जोखिम है, उसे उन सभी नुकसान के लिए पूरी तरह उत्तरदायी ठहराया जाएगा जो ऐसे उद्यम से होते हैं, भले ही कोई भी सावधानी बरती गई हो।

कोई बचाव नहीं है: जबकि सख्त दायित्व, ईश्वर की कृपा, तृतीय पक्ष का कृत्य, या वादी की सहमति को बचाव के रूप में पेश किया जा सकता है, कुछ अपवादों के साथ, वहाँ पूर्ण दायित्व के मामले में कोई अपवाद प्रदान नहीं किया गया है। यहाँ यह फैसला किया गया कि इस तरह के उद्योग इस आधार पर दायित्व से मुक्त नहीं हो सकते कि उन्होंने सभी उचित सावधानियां बरती थी या कि वादी की चोट तृतीय पक्ष की लापरवाही के कारण हुई थी।

2. मुआवज़े के दायित्व को सुनिश्चीत करना*:*

- कोर्ट ने कहा, कि मुआवज़े की राशि उद्यम की क्षमता और आकार से संबंधित होनी चाहिए और इसलिए यह पर्याप्त रूप से इतनी अधिक होनी चाहिए, कि पीड़ितों को पूरी तरह से मुआवज़ा दिया जा सके।

यह निर्णय लिया गया कि जब एक उद्यम खतरनाक या स्वाभाविक रूप से खतरनाक गतिविधियों में संलग्न होता है, तो यह समुदाय के प्रति यह सुनिश्चित करने का कर्तव्य निभाता है कि कोई नुकसान न हो। यदि नुकसान होता है, तो उद्यम को मुआवजा देने की लागत वहन करनी चाहिए।

3. पर्यावरण संरक्षण के लिए निर्देश*:*

सर्वोच्च न्यायालय ने आगे यह निर्देश दिया कि खतरनाक गतिविधियों में शामिल उद्योगों को यह सुनिश्चित करने के लिए तंत्र स्थापित किए जाएं कि वे ऐसे तरीके से संचालित हों जिससे पर्यावरण और सार्वजनिक स्वास्थ्य को कोई खतरा न हो। इसमें बेहतर सुरक्षा उपायों, नियमित निरीक्षण और घनी आबादी वाले क्षेत्रों से खतरनाक उद्योगों के पुनःस्थापन के लिए सिफारिशें शामिल थीं।

फिक्स्ड लीगल प्रिंसिपल

1. खतरे का पूरा दायित्व **:** नए खतरनाक और स्वाभाविक रूप से खतरनाक उद्योगों के लिए पूर्ण दायित्व का यह नया सिद्धांत अदालत ने उन्नत किया, जो अंग्रेजी सामान्य कानून में स्थापित सख्त दायित्व सिद्धांत से परे था। ऐसे उद्यम अपने कार्य के कारण किसी भी क्षति के पूर्ण रूप से उत्तरदायी होंगे, बिना किसी अपवाद के।

2. विस्तृत सार्वजनिक हित **:** इसमें इस विचार को मजबूत किया गया था कि कंपनियों की जिम्मेदारी केवल उनके कर्मचारियों या उनके उत्पादों के तत्काल उपभोक्ताओं तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह सार्वजनिक हित के लिए भी है- विशेष रूप से तब, जब उनकी गतिविधियाँ या संचालन मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने का खतरा पैदा करते हैं।

3. सावधानी सिद्धांत **:** एक ऐसा नाम नहीं दिया गया था, सावधानी के सिद्धांत को अपनाया गया था जिसका आधार निर्णय था, और वह पर्यावरण कानून का एक बहुत महत्वपूर्ण हिस्सा है।

यह एक वैज्ञानिक सिद्धांत था जो उस संबंध में आधारित था जिसमें यह कहा गया था कि अगर कोई कार्रवाई या नीति जनता या पर्यावरण को किसी भी प्रकार का नुकसान पहुंचाने की संभावना रखती है, तो उस नीति या कार्रवाई का प्रस्ताव देने वालों पर प्रमाण का बोझ होना चाहिए।

निर्णय के प्रभाव

1. न्यायिक सक्रियता*:*

एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ एक प्रमुख उदाहरण है न्यायिक सक्रियता का, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने पर्यावरण और सार्वजनिक स्वास्थ्य के मुद्दों को बनाए रखने के हित में पहल दिखाई। जिस तरह से अदालत ने मौजूदा कानूनी ढांचों से आगे बढ़ने की इच्छा दिखाई, उसने एक सुदृढ़ पर्यावरण न्यायशास्त्र के विकास के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को प्रदर्शित किया।

2. पर्यावरण कानून पर प्रभाव*:*

- यह मामला भारतीय पर्यावरण कानून में एक मील का पत्थर था और पर्यावरण संरक्षण पर अन्य निर्णयों के लिए आवश्यक प्रेरणा दें। पूर्ण दायित्व का सिद्धांत तब कई अन्य पर्यावरणीय मामलों में लागू किया गया और भारत में पर्यावरण कानून के कार्यान्वयन को काफी प्रभावित किया।

3. प्रभाव नीति पर *:*

- इस निर्णय ने भारत में पर्यावरण नीतियों और नियमों की अवधारणा में भूमिका निभाई जिससे खतरनाक पदार्थों से निपटने वाले उद्योगों पर अधिक सख्त नियंत्रण हुआ. इसके अलावा, यह पर्यावरणीय प्रभाव विश्लेषण और अधिक सख्त औद्योगिक सुरक्षा मानकों के लिए वैधानिक तंत्र बन गया.

निष्कर्ष

एम.सी. मेहता बनाम भारत संघ (1987) मामला एक ऐतिहासिक निर्णय माना गया है, क्योंकि इसने भारतीय पर्यावरण कानून पर गहरा प्रभाव डाला है। पूर्ण दायित्व के सिद्धांत ने उद्योगों को

पर्यावरणीय क्षति के लिए उत्तरदायी ठहराने में एक नया रुझान स्थापित किया, चाहे उन्होंने कितनी भी सावधानी बरती हो। इस निर्णय में, सार्वजनिक सुरक्षा और पर्यावरण की सुरक्षा को उद्योगिक हितों से ऊपर रखा गया। इसने भारत में पर्यावरण की सुरक्षा के लिए सख्त कानूनों के मार्ग को प्रशस्त किया। यह मामला पर्यावरण न्यायशास्त्र में एक मील का पत्थर बना हुआ है और औद्योगिक दुर्घटनाओं और पर्यावरणीय क्षरण से संबंधित मामलों में अभी भी इसका हवाला दिया जाता है।

Article 300 of the Indian Constitution and Tortious Liability of the State: A Comparative Analysis

Article 300 of the Indian Constitution deals with the liability of the Union and State governments in civil suits, drawing from the legal principle of tortious liability. Tort law governs civil wrongs where one party's actions cause harm to another, either through negligence or intentional misconduct. In this context, the state's role as a party liable for wrongs committed by its agents and officers is a vital subject of legal study.

1. Historical Context and Development of State Liability

The origins of state liability in India can be traced back to British rule. The Government of India Act, 1858 first addressed the issue of the Crown's liability in India, laying the groundwork for the later development of state responsibility under independent India's constitutional framework.

The British legal principle of "sovereign immunity" held that "the King can do no wrong," and hence, the state could not be sued for wrongs committed in its sovereign capacity. This idea was carried into Indian law by virtue of Section 65 of the Government of India Act, 1858, which stated that the East India Company (and later, the Crown) could be sued, but only

in limited circumstances. These limitations laid the groundwork for the nuanced understanding of state liability that would develop in independent India.

2. Article 300 of the Indian Constitution

Article 300 builds upon this legacy. It states that the Government of India or the government of a State may sue or be sued in the name of the Union or State, subject to limitations provided in law. Importantly, Article 300 distinguishes between the state acting in its sovereign capacity and the state acting in a non-sovereign or commercial capacity.

Text of Article 300:

- Article 300(1) explains that the Union of India and states can sue and be sued as juristic persons, much like their predecessors, the Dominion of India and the Provinces.
- Article 300(2) leaves it to the Parliament or the Legislature of a state to pass laws regulating the liability of the government in respect of their acts, providing flexibility for future legal developments.

In essence, Article 300 makes the state subject to legal scrutiny, allowing citizens to hold the government accountable for certain wrongs. However, the concept of "sovereign immunity" still limits this liability to acts that are not purely "sovereign functions."

3. Tortious Liability of the State: The Sovereign vs. Non-Sovereign Distinction

The Indian courts, when dealing with cases of state liability, have often had to distinguish between sovereign and non-sovereign functions. This distinction stems from the Vidhyawati case (1962), where the Supreme Court held the state liable for the tortious actions of its servants in a motor vehicle accident, as this was considered a non-sovereign function.

Subsequent rulings, such as in the Kasturi Lal case (1965), clarified this distinction further. In Kasturi Lal, the state was not held liable for the wrongful seizure of gold by police officers (a sovereign act). This case reinforced the doctrine of sovereign immunity, which protects the

state from liability in cases involving the exercise of governmental functions like law enforcement.

4. The Crown Proceedings Act, 1947 (United Kingdom)

India's law on state liability was heavily influenced by the Crown Proceedings Act of 1947 in the UK, which allowed the British government to be sued for tortious acts. The Act was a significant departure from the historical "Crown immunity" doctrine, wherein the Crown could not be sued. Under the 1947 Act, the British government could be sued in both contract and tort, provided the wrongful act was committed by government employees in their non-sovereign functions.

The Act allowed individuals to claim damages from the state for tortious acts like negligence, ensuring that the government was not above the law when it acted like a private citizen in areas such as public services and commercial ventures. The principle behind this legislation influenced Indian lawmakers when framing the Constitution, but India's sovereign immunity doctrine remained more rigid compared to the UK's, especially in sovereign functions.

5. The Federal Tort Claims Act, 1946 (United States)

The Federal Tort Claims Act (FTCA) of 1946 in the U.S. is another landmark statute in understanding government liability in torts. Before the FTCA, the U.S. government was also immune from being sued for torts committed by its agents, based on the sovereign immunity doctrine.

The FTCA changed this by allowing the U.S. government to be sued for tortious actions committed by its employees while acting within the scope of their employment, similar to how private individuals would be liable. However, the Act provided several exceptions. For instance, it retained immunity for acts performed as part of military or foreign policy functions, drawing a clear line between sovereign and non-sovereign actions.

The FTCA has influenced the interpretation of state liability across many jurisdictions, including India, where similar debates around the scope of sovereign functions continue.

6. State Immunity in India: A Flexible Approach?

In India, the courts have struggled with the balance between state immunity and state liability. The Bhagwati Prasad v. Delhi State case exemplifies this struggle. Here, the Supreme Court ruled that even when the government engages in functions like construction or infrastructure projects (non-sovereign acts), it should be held accountable for negligence and tortious actions.

However, despite judicial efforts to expand state liability, sovereign immunity remains a strong defense in India. The Kasturi Lal case continues to cast a long shadow, with courts generally granting immunity for acts deemed to be sovereign. But in a few decades the trend has seemingly changed and now it can be safely stated that the kasturi lal case has been bypassed at multiple instances. (Refer class notes).

7. Modern Developments and Need for Reform

As India evolves, the distinctions between sovereign and non-sovereign functions are becoming more blurred. The government is increasingly engaged in commercial activities, public services, and infrastructure development, leading to greater interaction with citizens in non-sovereign capacities. This raises questions about the continued applicability of strict sovereign immunity.

Countries like the UK and the U.S. have moved towards greater state accountability with the Crown Proceedings Act and the FTCA, respectively. India may benefit from a similar reform, perhaps through a legislative framework akin to the Crown Proceedings Act that clearly defines the boundaries of sovereign functions and provides a more transparent mechanism for citizens to claim compensation.

8. Conclusion

Article 300 of the Indian Constitution provides the foundation for state liability, but the principles of sovereign immunity and tortious liability remain in a state of flux. While Indian courts have expanded the scope of state liability in non-sovereign functions, the doctrine of sovereign immunity continues to offer significant protection to the government.

Comparatively, the Crown Proceedings Act of 1947 and the Federal Tort Claims Act of 1946 show how other jurisdictions have addressed these challenges, offering models that India could consider as it looks to balance government accountability with the practical necessities of governance. Reforming India's tortious liability laws could ensure that citizens are better protected against state actions while maintaining necessary protections for sovereign functions.

भारतीय संविधान का अनुच्छेद **300** और राज्य के यातिवैधानिक **(Tortious)** दायित्व **:** एक तुलनात्मक अध्ययन

अनुच्छेद *300* भारतीय संविधान में संघ और राज्य सरकारों की नागरिक मुकदमों में उत्तरदायित्व की बात करता है। यातिवैधानिक *(tort)* कानून उन नागरिक गलतियों से संबंधित है जहाँ एक पक्ष की गतिविधियों से दूसरे पक्ष को हानि पहुँचती है, चाहे वह लापरवाही से हो या जानबूझकर। इस संदर्भ में, राज्य की जिम्मेदारी की अवधारणा और इसके अधिकारी या कर्मचारी द्वारा किए गए गलत कार्यों के लिए उत्तरदायी ठहराना एक महत्वपूर्ण कानूनी विषय है।

1. राज्य की जिम्मेदारी का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

भारत में राज्य की जिम्मेदारी की शुरुआत ब्रिटिश शासन के समय से होती है। भारत सरकार अधिनियम, 1858 में पहली बार भारत में क्राउन (राजसत्ता) की जिम्मेदारी का उल्लेख हुआ। इससे स्वतंत्र भारत में राज्य की जिम्मेदारी की संवैधानिक संरचना का आधार तैयार हुआ।

ब्रिटिश कानून में यह सिद्धांत था कि "राजा कोई गलत नहीं कर सकता", और इसलिए राज्य को इसके सार्वभौमिक कर्तव्यों (sovereign functions) के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता था। यह सिद्धांत भारत में भारत सरकार अधिनियम, 1858 की धारा 65 के माध्यम से लागू किया गया, जिसमें

कहा गया था कि ईस्ट इंडिया कंपनी (बाद में क्राउन) को सीमित परिस्थितियों में ही मुकदमे का सामना करना पड़ सकता है। यह सीमाएं स्वतंत्र भारत में राज्य की जिम्मेदारी को बेहतर ढंग से समझने की नींव रखती हैं।

2. भारतीय संविधान का अनुच्छेद **300**

अनुच्छेद 300 इसी विरासत को आगे बढ़ाता है। यह कहता है कि भारत सरकार या राज्य सरकार को संघ या राज्य के नाम से मुकदमा किया जा सकता है, लेकिन यह सीमाएँ विधि द्वारा निर्धारित की जाती हैं। अनुच्छेद 300 यह स्पष्ट करता है कि राज्य अपने सार्वभौमिक कर्तव्यों और गैर-सार्वभौमिक कार्यों (जैसे व्यापारिक गतिविधियाँ) के बीच भिन्नता करता है।

अनुच्छेद **300** का पाठ**:**

- अनुच्छेद 300(1): यह स्पष्ट करता है कि भारत संघ और राज्य एक न्यायिक व्यक्ति की तरह मुकदमा कर सकते हैं या मुकदमा झेल सकते हैं।
- अनुच्छेद 300(2): इसमें यह कहा गया है कि संसद या राज्य विधानमंडल द्वारा राज्य के कार्यों के संबंध में उत्तरदायित्व को नियंत्रित करने वाले कानून बनाए जा सकते हैं।

इस प्रकार, अनुच्छेद 300 राज्य को कानूनी जांच के अधीन रखता है, जिससे नागरिक कुछ गलतियों के लिए सरकार को जिम्मेदार ठहरा सकते हैं। हालांकि, "सार्वभौमिक कर्तव्य" की अवधारणा अभी भी उन कार्यों के लिए राज्य की जिम्मेदारी को सीमित करती है जो पूरी तरह से सरकारी कार्यों से संबंधित हैं।

3. राज्य की यातिवैधानिक जिम्मेदारी**:** सार्वभौमिक और गैर-सार्वभौमिक कार्यों का अंतर

भारतीय न्यायालयों ने राज्य की जिम्मेदारी के मामलों में अक्सर सार्वभौमिक और गैर-सार्वभौमिक कार्यों के बीच अंतर किया है। यह अंतर विद्यावती बनाम लोक अभियोजक (1962) मामले से उपजा, जहाँ सर्वोच्च न्यायालय ने राज्य को उसके कर्मचारियों द्वारा वाहन दुर्घटना में की गई यातिवैधानिक गलती के लिए जिम्मेदार ठहराया। यह कार्य गैर-सार्वभौमिक माना गया था।

इसके बाद कस्तूरी लाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (1965) मामले में, राज्य को पुलिस द्वारा सोने की गलत जब्ती (जो एक सार्वभौमिक कार्य था) के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया गया। इस मामले ने

सार्वभौमिक छूट (sovereign immunity) के सिद्धांत को मजबूत किया, जो राज्य को सरकारी कार्यों जैसे कानून प्रवर्तन के मामलों में जिम्मेदारी से बचाव प्रदान करता है।

4. क्राउन प्रोसिडिंग्स एक्ट**, 1947 (**यूनाइटेड किंगडम**)**

भारत का राज्य उत्तरदायित्व कानून क्राउन प्रोसिडिंग्स एक्ट, 1947 से काफी प्रभावित है, जो ब्रिटिश सरकार को यातिवैधानिक कार्यों के लिए मुकदमा करने की अनुमति देता है। यह अधिनियम ऐतिहासिक "क्राउन इम्युनिटी" सिद्धांत से बड़ा बदलाव था, जिसमें राज्य को मुकदमा करने से छूट थी। 1947 के अधिनियम के तहत, ब्रिटिश सरकार को गैर-सार्वभौमिक कार्यों के लिए मुकदमा किया जा सकता था, जैसे कि सरकारी कर्मचारी द्वारा गलती।

यह अधिनियम नागरिकों को राज्य के खिलाफ यातिवैधानिक कार्यों के लिए हर्जाना मांगने की अनुमति देता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि सरकार कानून के अधीन है जब यह सार्वजनिक सेवाओं और व्यावसायिक गतिविधियों में एक निजी नागरिक की तरह कार्य करती है। इस कानून ने भारतीय विधायकों को संविधान तैयार करने के समय प्रभावित किया, लेकिन भारत में सार्वभौमिक छूट का सिद्धांत यूके की तुलना में अधिक सख्त रहा।

5. फेडरल टॉर्ट क्लेम्स एक्ट**, 1946 (**संयुक्त राज्य अमेरिका**)**

फेडरल टॉर्ट क्लेम्स एक्ट (FTCA), 1946 अमेरिका में राज्य की यातिवैधानिक जिम्मेदारी को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण कानून है। FTCA से पहले, अमेरिकी सरकार भी अपने एजेंटों द्वारा की गई यातिवैधानिक गलतियों के लिए मुकदमे से प्रतिरक्षित थी।

FTCA ने यह परिवर्तन किया, जिससे अमेरिकी सरकार को गैर-सार्वभौमिक कार्यों के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। हालांकि, अधिनियम ने कई अपवाद भी प्रदान किए, जैसे कि सैन्य या विदेश नीति कार्यों के लिए प्रतिरक्षा।

6. भारत में राज्य छूट**:** एक लचीला दृष्टिकोण**?**

भारत में, न्यायालयों ने राज्य की छूट और राज्य की जिम्मेदारी के बीच संतुलन बनाए रखने के लिए संघर्ष किया है। भगवती प्रसाद बनाम दिल्ली राज्य मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि जब सरकार निर्माण या ढांचागत परियोजनाओं जैसे गैर-सार्वभौमिक कार्यों में संलग्न होती है, तो उसे

लापरवाही और यातिवैधानिक गलतियों के लिए जिम्मेदार ठहराया जाना चाहिए। हालांकि, न्यायिक प्रयासों के बावजूद, भारत में सार्वभौमिक छूट अभी भी एक मजबूत रक्षा बनी हुई है। कस्तूरी लाल मामला अभी भी लागू है, लेकिन इसे कई मामलों में दरकिनार किया गया है।

7. आधुनिक विकास और सुधार की आवश्यकता

जैसे-जैसे भारत विकसित हो रहा है, सार्वभौमिक और गैर-सार्वभौमिक कार्यों के बीच विभाजन धुंधला होता जा रहा है। सरकार अधिक वाणिज्यिक गतिविधियों, सार्वजनिक सेवाओं और बुनियादी ढांचा विकास में शामिल हो रही है। इस प्रकार, एक पारदर्शी कानूनी ढांचा आवश्यक है, जो नागरिकों को सरकार द्वारा की गई गलतियों के खिलाफ पर्याप्त संरक्षण प्रदान कर सके।

8. निष्कर्ष

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 300 राज्य की उत्तरदायित्व की नींव प्रदान करता है, लेकिन सार्वभौमिक छूट और यातिवैधानिक जिम्मेदारी के सिद्धांत अभी भी स्पष्ट रूप से परिभाषित नहीं हैं। हालाँकि भारतीय न्यायालयों ने गैर-सार्वभौमिक कार्यों में राज्य की जिम्मेदारी का विस्तार किया है, फिर भी सरकारी कार्यों में छूट एक महत्वपूर्ण सुरक्षा है।

क्राउन प्रोसिडिंग्स एक्ट, 1947 और फेडरल टॉर्ट क्लेम्स एक्ट, 1946 दिखाते हैं कि अन्य देशों ने इन चुनौतियों का समाधान कैसे किया है। भारत भी राज्य उत्तरदायित्व कानूनों में सुधार कर सकता है, जिससे नागरिकों को बेहतर सुरक्षा मिल सके और सरकारी कार्यों की आवश्यक सुरक्षा भी बनी रहे।

Joint Tortfeasors and Joint and Several Liability in India

1. Introduction to Joint Tortfeasors

In the context of tort law, a joint tortfeasor refers to two or more persons whose collective actions result in harm or injury to a third party. Joint tortfeasors can act in concert, or their separate actions can cumulatively contribute to the injury of the plaintiff. Joint tortfeasors are collectively responsible, meaning that the injured party has the option to sue one, some, or all of them. This concept is tied to the principle of joint and several liability, which ensures that the injured party is not left uncompensated if one or more tortfeasors are insolvent.

टॉर्ट कानून के संदर्भ में, सह टॉर्टफीसर उन दो या अधिक व्यक्तियों को कहते हैं जिनके सामूहिक कार्यों से तीसरे पक्ष को नुकसान या चोट पहुंचती है। सह टॉर्टफीसर्स एक साथ कार्य कर सकते हैं, या उनके अलग-अलग कार्यों से वादी को सामूहिक रूप से नुकसान हो सकता है। सह टॉर्टफीसर्स सामूहिक रूप से जिम्मेदार होते हैं, जिसका अर्थ है कि घायल पक्ष किसी एक, कुछ या सभी के खिलाफ मुकदमा कर सकता है। यह अवधारणा संयुक्त और व्यक्तिगत जिम्मेदारी के सिद्धांत से जुड़ी है, जो सुनिश्चित करती है कि यदि एक या अधिक टॉर्टफीसर दिवालिया हो जाते हैं, तो घायल पक्ष को मुआवजा मिलता है।

2. The Principle of Joint and Several Liability

Joint and several liability ensures that if multiple parties are responsible for the same harm, the plaintiff can recover the entire compensation from any one or more of the tortfeasors. This principle protects the injured party by not requiring them to split their claim among various defendants. For example, if A and B together cause harm to C, C can sue either A or B for the entire damage, and whoever pays can later seek contribution from the other.

संयुक्त और व्यक्तिगत जिम्मेदारी का सिद्धांत सुनिश्चित करता है कि यदि कई पक्ष समान नुकसान के लिए जिम्मेदार हैं, तो वादी किसी एक या अधिक टॉर्टफीसर्स से पूरा मुआवजा वसूल सकता है। यह

सिद्धांत घायल पक्ष की रक्षा करता है, जिससे उसे विभिन्न प्रतिवादियों के बीच अपने दावे को विभाजित करने की आवश्यकता नहीं होती। उदाहरण के लिए, यदि A और B मिलकर C को नुकसान पहुंचाते हैं, तो C पूरे नुकसान के लिए A या B में से किसी एक के खिलाफ मुकदमा कर सकता है, और जिसने भुगतान किया, वह बाद में दूसरे से योगदान की मांग कर सकता है।

3. Key Elements of Joint Tortfeasorship

To establish the liability of joint tortfeasors, the following factors are often considered:
- Common Design: The parties involved must have a common intent or agreement in committing the tortious act.
- Contributory Acts: The independent or collective acts of each tortfeasor must contribute to the same injury or damage to the plaintiff.

An illustrative case is Kanhaiya Lal v. National Garage (1962), where both the owner and driver of a vehicle were held jointly liable for a road accident. The court reasoned that the driver's actions, though independent, were authorized by the owner, establishing a common design and contribution to the harm.

सह टॉर्टफीसर्स की जिम्मेदारी स्थापित करने के लिए, निम्नलिखित कारकों पर विचार किया जाता है:
- समान योजना: शामिल पक्षों के बीच टॉर्ट करने के लिए सामान्य इरादा या समझौता होना चाहिए।
- योगदानकारी कार्य: प्रत्येक टॉर्टफीसर की स्वतंत्र या सामूहिक क्रियाएं वादी को समान चोट या नुकसान में योगदान करती हैं।

एक उदाहरण Kanhaiya Lal बनाम National Garage (1962) का मामला है, जिसमें वाहन के मालिक और चालक दोनों को सड़क दुर्घटना के लिए संयुक्त रूप से उत्तरदायी ठहराया गया था। अदालत ने यह तर्क दिया कि चालक के कार्य, यद्यपि स्वतंत्र थे, मालिक द्वारा अधिकृत थे, जिससे समान योजना और नुकसान में योगदान स्थापित हुआ।

4. Case Law in India: Important Judgments

Several important Indian cases have clarified the principles surrounding joint tortfeasorship and joint and several liability:

1. State of Punjab v. Modern Cultivators (AIR 1965 SC 17): The Supreme Court of India held that when multiple parties are responsible for causing harm, they are jointly and severally liable, irrespective of their level of participation. The court emphasized that the plaintiff's right to full compensation outweighs the defendants' internal arrangements.

2. Tika Ram v. State of Uttar Pradesh (2009): This case involved a road accident where negligence on the part of multiple parties led to the death of a pedestrian. The court ruled that the injured party could claim the full amount from any one tortfeasor, and it was up to that tortfeasor to seek contributions from the others.

3. Lloyds Bank v. Shailendra Kumar (1992): In this case, the court highlighted that each joint tortfeasor is independently liable for the entire amount of damages. This is true even when the harm was caused by the collective actions of multiple individuals.

कई महत्वपूर्ण भारतीय मामलों ने सह टॉर्टफीसर्स और संयुक्त तथा व्यक्तिगत जिम्मेदारी के सिद्धांतों को स्पष्ट किया है:

1. State of Punjab बनाम Modern Cultivators (AIR 1965 SC 17): भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना कि जब कई पक्ष नुकसान पहुंचाने के लिए जिम्मेदार होते हैं, तो वे बिना भागीदारी के स्तर की परवाह किए संयुक्त और व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होते हैं। अदालत ने जोर दिया कि वादी के पूर्ण मुआवजे का अधिकार प्रतिवादियों की आंतरिक व्यवस्थाओं से ऊपर है।

2. Tika Ram बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2009): यह मामला एक सड़क दुर्घटना से जुड़ा था, जिसमें कई पक्षों की लापरवाही से एक पैदल यात्री की मौत हो गई थी। अदालत ने यह फैसला दिया कि घायल पक्ष किसी भी एक टॉर्टफीसर से पूरी राशि की मांग कर सकता है, और वह टॉर्टफीसर दूसरों से योगदान की मांग कर सकता है।

3. Lloyds Bank बनाम Shailendra Kumar (1992): इस मामले में, अदालत ने यह स्पष्ट किया कि प्रत्येक सह टॉर्टफीसर पूरी क्षति राशि के लिए स्वतंत्र रूप से उत्तरदायी है, भले ही हानि कई व्यक्तियों की सामूहिक क्रियाओं से हुई हो।

5. Advanced Concepts: Contribution and Indemnity

When one tortfeasor pays the entire damages, they may seek contribution from the other joint tortfeasors, based on the proportion of their responsibility. This is known as the right to contribution. Additionally, a tortfeasor can seek indemnity from another party if the latter is primarily responsible for the harm. This right of indemnity ensures that liability ultimately rests with the party most at fault.

जब एक टॉर्टफीसर पूरे नुकसान का भुगतान करता है, तो वह अन्य सह टॉर्टफीसर्स से उनके जिम्मेदारी के अनुपात में योगदान की मांग कर सकता है। इसे योगदान का अधिकार कहा जाता है। इसके अलावा, एक टॉर्टफीसर दूसरे पक्ष से क्षतिपूर्ति की मांग कर सकता है यदि दूसरा पक्ष हानि के लिए मुख्य रूप से जिम्मेदार है। यह क्षतिपूर्ति का अधिकार सुनिश्चित करता है कि उत्तरदायित्व अंततः उस पक्ष पर हो जो सबसे अधिक दोषी है।

6. Defenses Available to Joint Tortfeasors

Joint tortfeasors can raise several defenses to mitigate or escape liability:
- Contributory Negligence: If the plaintiff's own negligence contributed to the harm, the damages may be reduced proportionately.
- Volenti Non Fit Injuria: If the plaintiff consented to the risk of harm, the tortfeasors may avoid liability altogether.

सह टॉर्टफीसर्स उत्तरदायित्व को कम करने या बचने के लिए कई बचाव का सहारा ले सकते हैं:
- सहयोगी लापरवाही: यदि वादी की अपनी लापरवाही से नुकसान हुआ, तो क्षतिपूर्ति को अनुपातिक रूप से कम किया जा सकता है।
- Volenti Non Fit Injuria: यदि वादी ने जोखिम को स्वीकार किया, तो टॉर्टफीसर्स पूरी तरह से उत्तरदायित्व से बच सकते हैं।

7. Conclusion

The doctrine of joint tortfeasors and joint and several liability plays a critical role in ensuring that injured parties are compensated fully and fairly. In the Indian context, courts have progressively expanded the scope of these doctrines to ensure that no plaintiff is left uncompensated due to the insolvency of one tortfeasor. Indian courts have drawn inspiration from various legal systems, including English common law and American tort law, to shape the current approach.

NEGLIGENCE

Definition & Essentials of Negligence (Extended Version with Case Laws and Illustrations)

1. Definition of Negligence:

Negligence refers to the breach of a legal duty to take care that results in unintended damage or injury to another person. It is the failure to exercise a standard of care that a reasonable and prudent person would have exercised under similar circumstances. The foundation of negligence lies in the protection of the rights of individuals from harm caused by another's carelessness.

Negligence does not require an intention to cause harm, but it involves failure to avoid foreseeable risks. In simpler terms, negligence is the **"absence of due care."**

Key Components:

1. **Duty of Care**: A legal obligation to avoid causing harm to others.
2. **Breach of Duty**: A failure to meet the required standard of care.

3. **Causation**: A direct link between the breach of duty and the harm caused.
4. **Damages**: Actual harm or injury suffered as a result of the breach.

2. Essentials of Negligence

The essentials of negligence are the building blocks that must be established for a claim of negligence to succeed.

A. Duty of Care:

The concept of **duty of care** was formally established in the landmark English case **Donoghue v. Stevenson (1932)**, commonly known as the "snail in the bottle" case. The court held that manufacturers owe a duty of care to consumers, even if there is no direct contract between them.

- **Donoghue v. Stevenson [1932] AC 562**:
  In this case, Mrs. Donoghue found a decomposed snail in a ginger beer bottle purchased by her friend. She suffered from shock and illness. The House of Lords ruled that the manufacturer owed a duty of care to the ultimate consumer, establishing the **'neighbour principle'**. Lord Atkin stated that "you must take reasonable care to avoid acts or omissions which you can reasonably foresee would be likely to injure your neighbour," where **'neighbour'** is defined as anyone who could be affected by your actions.

In Indian law, the principle of duty of care is similar. Under **Indian tort law**, courts have recognized that individuals and entities owe a duty of care to avoid harm to others. This is seen in cases involving negligence in professional services, motor vehicle accidents, and public safety.

- **Municipal Corporation of Delhi v. Subhagwanti, AIR 1966 SC 1750**:
  In this case, a clock tower in Delhi collapsed, killing several people. The Supreme Court held that the Municipal Corporation, which was responsible for the maintenance

of the tower, owed a duty of care to the public, and their failure to maintain it constituted negligence.

Illustration:
A doctor performing surgery owes a duty of care to their patient. If the doctor fails to sterilize the instruments and the patient contracts an infection, the doctor can be held liable for negligence.

हिंदी में: कर्तव्य का कर्तव्य (Duty of Care) यह सुनिश्चित करने के लिए है कि प्रतिवादी द्वारा सावधानीपूर्वक कार्य किया जाए ताकि वादी को किसी प्रकार का नुकसान न हो। इसका महत्वपूर्ण उदाहरण **Donoghue v. Stevenson (1932)** है, जहाँ अदालत ने यह निर्धारित किया कि निर्माता उपभोक्ताओं के प्रति सावधानी का कर्तव्य रखते हैं।

B. Breach of Duty:

Once a duty of care is established, the plaintiff must show that the defendant **breached** this duty. A breach occurs when the defendant fails to meet the expected standard of care that a reasonable person in the same situation would have exercised.

In Indian law, breach of duty is similarly applied, where courts evaluate whether the defendant's actions were below the standard expected.

- **Poonam Verma v. Ashwin Patel (1996)**:
  In this case, the Supreme Court of India held a homoeopathic practitioner liable for medical negligence when he prescribed allopathic drugs beyond his area of expertise, which led to the patient's death. This was a breach of the expected standard of care in medical practice.

Illustration:
A bus driver, speeding through a crowded area, strikes a pedestrian. The driver breached their duty by failing to follow road safety norms, and this breach led to the accident.

हिंदी में: कर्तव्य का उल्लंघन तब होता है जब प्रतिवादी सावधानी के अपेक्षित मानक का पालन करने में विफल रहता है। उदाहरण के लिए, **Blyth v. Birmingham Waterworks Co. (1856)** मामले में यह निर्धारित किया गया कि कोई व्यक्ति अपनी सावधानी के कर्तव्य का उल्लंघन तब करता है जब वह वह काम नहीं करता जो एक सामान्य समझदार व्यक्ति करता।

C. Causation:

Causation establishes that the breach of duty **caused the harm** to the plaintiff. This element is divided into two parts:

1. **Causation in Fact**: The injury would not have occurred 'but for' the defendant's actions.
2. **Proximate Cause**: The damage must be a foreseeable result of the breach.

- **Barnett v. Chelsea & Kensington Hospital (1969)**:
  In this case, a man was sent home from the hospital without proper diagnosis, later dying of arsenic poisoning. The court held that, while the hospital had breached its duty, the man would have died anyway, so causation was not established.

Illustration:
If a person slips on a wet floor in a store and gets injured, they must show that the store's negligence in not placing a warning sign was the cause of the injury.

हिंदी में: कारण संबंध (Causation) साबित करता है कि प्रतिवादी की लापरवाही वादी को हुए नुकसान का कारण थी। **Barnett v. Chelsea & Kensington Hospital (1969)** में, यह पाया गया कि प्रतिवादी ने कर्तव्य का उल्लंघन किया, लेकिन वह कारण नहीं था जिससे वादी की मृत्यु हुई।

D. Damage:

Finally, the plaintiff must prove that actual **damage or injury** occurred due to the breach of duty. The damage must not be speculative; it should be a real and measurable harm, whether physical, financial, or emotional.

- **Grant v. Australian Knitting Mills (1936)**:
  In this case, the plaintiff suffered skin irritation due to defective underwear. The court held the manufacturer liable for damages caused by negligence in the manufacturing process.

In Indian law, damage must be real and provable. A mere threat of harm is insufficient to claim negligence.

Illustration:
A person who is hit by a car and suffers a broken leg can claim compensation for medical bills and loss of income due to the injury.

हिंदी में: नुकसान (Damage) वह नुकसान है जो वादी को प्रतिवादी की लापरवाही के कारण हुआ। यह नुकसान वास्तविक होना चाहिए, जैसा कि **Grant v. Australian Knitting Mills (1936)** मामले में देखा गया, जहाँ निर्माता को दोषपूर्ण वस्त्रों के कारण हुए नुकसान के लिए जिम्मेदार ठहराया गया।

Summary of Essentials:

In summary, for a successful negligence claim, the plaintiff must establish:

1. **Duty of Care**: The defendant owed the plaintiff a duty to act with care.
2. **Breach of Duty**: The defendant failed to meet the standard of care.
3. **Causation**: The breach caused the plaintiff's injury.
4. **Damage**: The plaintiff suffered actual harm or loss.

2. Duties of the Plaintiff

In a negligence claim, it is essential for the **plaintiff** to establish that the **defendant** owed them a duty of care and that this duty was **breached**. Merely stating that the defendant was negligent is not enough; concrete evidence must be presented. The plaintiff must also

demonstrate a **causal connection** between the breach of duty and the injury suffered. The injury or damage should be a direct result of the defendant's negligence.

The burden of proof lies on the plaintiff to prove the following:

1. **Existence of Duty**: The plaintiff must first prove that the defendant owed them a duty of care. This is often based on the relationship between the parties, such as doctor-patient, manufacturer-consumer, etc.
2. **Breach of Duty**: The plaintiff must show that the defendant failed to meet the expected standard of care.
3. **Causation**: The plaintiff must establish that the injury suffered was directly caused by the defendant's breach.
4. **Damages**: The plaintiff must prove that they suffered real harm or loss as a result of the defendant's actions.

Case Law Example:

- **Roe v. Minister of Health (1954)**: In this case, the plaintiff failed to prove that the hospital was negligent in the storage of anesthetics, as the risk was not foreseeable at the time. The plaintiff could not establish that the injury was a direct result of negligence.

Illustration:
If a pedestrian is hit by a speeding car, the pedestrian (plaintiff) must show that the driver (defendant) owed a duty to drive safely, breached that duty by speeding, and caused harm to the pedestrian as a result.

हिंदी में:
लापरवाही के मामले में, वादी को यह साबित करना होता है कि प्रतिवादी का वादी के प्रति सावधानी का कर्तव्य था और उस कर्तव्य का उल्लंघन हुआ। यह भी आवश्यक है कि वादी यह साबित करे कि प्रतिवादी की लापरवाही के कारण उसे प्रत्यक्ष रूप से नुकसान हुआ।
वादी को निम्नलिखित सिद्ध करना होता है:

1. कर्तव्य का अस्तित्व: वादी को यह साबित करना होता है कि प्रतिवादी पर वादी के प्रति सावधानी बरतने का कानूनी कर्तव्य था।

2. कर्तव्य का उल्लंघन: वादी को दिखाना होता है कि प्रतिवादी आवश्यक सावधानी बरतने में विफल रहा।
3. कारण संबंध: वादी को यह साबित करना होता है कि प्रतिवादी की लापरवाही के कारण ही उसे चोट पहुँची।
4. नुकसान: वादी को यह सिद्ध करना होता है कि उसे प्रतिवादी की लापरवाही के कारण वास्तविक नुकसान हुआ।

---

3. Reasonable Foreseeability of Injury

The concept of **reasonable foreseeability** is crucial in negligence claims. For a defendant to be held liable for negligence, the injury or damage suffered by the plaintiff must have been a reasonably foreseeable consequence of the defendant's actions. This means that a reasonable person in the same position as the defendant would have been able to predict that their actions could lead to harm. If the harm was **unforeseeable**, the defendant may not be held liable.

Case Law Example:

- **Overseas Tankship (UK) Ltd v. Morts Dock & Engineering Co Ltd (The Wagon Mound) (1961)**: In this case, the Privy Council held that the damage caused by an oil spill that led to a fire was not reasonably foreseeable. The defendants were not held liable because the fire was an unlikely result of the spill.

Illustration:
If a person leaves a heavy object on a balcony, it is foreseeable that if the object falls, it could injure someone passing below. Therefore, failing to secure the object would be negligent if someone gets hurt.

हिंदी में:
सामान्य पूर्वानुमान की संभावना (Reasonable Foreseeability) लापरवाही के मामलों में अत्यंत महत्वपूर्ण सिद्धांत है। यह सिद्धांत कहता है कि प्रतिवादी के कार्यों का परिणाम, जो वादी को नुकसान पहुंचाता है, तर्कसंगत रूप से पूर्वानुमानित होना चाहिए। इसका अर्थ है कि प्रतिवादी की स्थिति में कोई भी समझदार व्यक्ति यह अनुमान लगा सकता था कि उसके कार्य से किसी को चोट पहुँच सकती है। यदि नुकसान की संभावना पूर्वानुमानित नहीं थी, तो प्रतिवादी को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता।

उदाहरण:

यदि कोई व्यक्ति बालकनी पर भारी वस्तु रखता है और वह गिरकर किसी राहगीर को चोट पहुँचाती है, तो यह पूर्वानुमानित है कि वस्तु के गिरने से चोट लग सकती है। ऐसे में, वस्तु को सुरक्षित न रखने पर व्यक्ति को लापरवाही के लिए उत्तरदायी ठहराया जाएगा।

4. Duty of Counsel Towards Client

Legal professionals, including lawyers and advocates, owe a **duty of care** towards their clients. This duty requires them to act with competence, diligence, and to serve the best interests of their clients. If a lawyer fails to exercise the necessary standard of care in handling a client's case, whether through ignorance of the law, failure to file essential documents on time, or providing incorrect legal advice, they may be held liable for **professional negligence**.

This responsibility extends to various legal tasks such as representing the client in court, advising on legal matters, and ensuring that the client's rights are protected. **Professional misconduct** or negligence can lead to financial loss, wrongful convictions, or adverse legal consequences for the client, making the counsel liable for damages.

Case Law Example:

- **P. D. Khandekar v. Bar Council of Maharashtra, AIR 1984 SC 110**:
  In this case, the Supreme Court held that a lawyer who fails to appear in court on behalf of their client without a reasonable excuse or acts in a manner detrimental to the client's interest can be held liable for professional misconduct.

Illustration:
A lawyer fails to file an appeal within the prescribed time, resulting in the client losing the right to appeal. In such a case, the lawyer may be held liable for negligence as they failed to meet the standard of care expected of a competent legal professional.

हिंदी में:
वकील और अधिवक्ता अपने मुवक्किलों के प्रति सावधानी का कर्तव्य निभाने के लिए बाध्य होते हैं। यह कर्तव्य यह सुनिश्चित करता है कि वे अपनी कानूनी सेवाएं कुशलता और परिश्रम के साथ प्रदान करें और मुवक्किल के हितों की रक्षा करें। यदि कोई वकील अपने मुवक्किल के मामले को ठीक से नहीं

संभालता, जैसे कि समय पर आवश्यक दस्तावेज दाखिल नहीं करना या गलत कानूनी सलाह देना, तो उसे पेशेवर लापरवाही के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।

उदाहरण:

यदि कोई वकील समय सीमा के भीतर अपील दाखिल करने में विफल रहता है, जिससे मुवक्किल को अपील का अधिकार खोना पड़ता है, तो ऐसे मामले में वकील को लापरवाही के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है क्योंकि उसने आवश्यक मानकों का पालन नहीं किया।

---

5. Duty in the Medical Profession

In the **medical profession**, doctors, nurses, and other healthcare professionals are expected to exercise a high degree of care and skill when treating patients. Their duty extends to proper diagnosis, treatment, and post-treatment care. If a healthcare provider fails to meet this standard of care and causes harm to a patient, they can be held liable for **medical negligence**.

Common instances of medical negligence include:

- **Misdiagnosis**: Failing to diagnose a condition that a competent doctor would have identified.
- **Improper Treatment**: Providing the wrong treatment or medication.
- **Surgical Errors**: Making avoidable mistakes during surgery.
- **Failure to Obtain Informed Consent**: Not fully informing the patient about the risks involved in a procedure.

Case Law Example:

- **Dr. Laxman Balkrishna Joshi v. Dr. Trimbak Bapu Godbole, AIR 1969 SC 128**: In this landmark case, the Supreme Court held that a doctor owes a duty of care to his patient to decide whether to undertake a particular treatment and the manner in which it should be administered. Failure to adhere to these standards amounts to negligence.

Illustration:
A surgeon operates on the wrong limb due to a communication error during a surgery. This

would be considered medical negligence, and the surgeon can be held liable for the damage caused to the patient.

हिंदी में:
चिकित्सा पेशे में चिकित्सक, नर्स और अन्य स्वास्थ्य सेवा पेशेवरों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपने मरीजों का इलाज करते समय अत्यधिक सावधानी और कौशल का प्रदर्शन करें। यह कर्तव्य उचित निदान, उपचार और उपचार के बाद देखभाल तक विस्तृत होता है। यदि कोई स्वास्थ्य सेवा प्रदाता इस सावधानी के मानक का पालन करने में विफल रहता है और इससे मरीज को नुकसान होता है, तो उसे चिकित्सा लापरवाही के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।

उदाहरण:

यदि एक सर्जन संचार त्रुटि के कारण गलत अंग पर ऑपरेशन करता है, तो इसे चिकित्सा लापरवाही माना जाएगा और सर्जन को हुए नुकसान के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।

6. Duty Must be Owed to the Plaintiff

For a claim of negligence to succeed, it is crucial that the **defendant owed a duty of care** to the plaintiff. This duty arises in situations where the defendant's actions could reasonably foreseeably affect the plaintiff. If no such duty exists between the parties, then a negligence claim cannot be established, no matter how severe the damage might be. The existence of this duty is often determined by the relationship between the parties and the context of the case.

Case Law Example:

- **Donoghue v. Stevenson (1932)**:
  This landmark case established the "neighbor principle," which says that one must take reasonable care to avoid acts or omissions that could foreseeably injure their "neighbor," meaning anyone who might be directly affected by their actions.

Illustration:
If a manufacturer sells defective goods that injure the consumer, the manufacturer owes a duty of care to the consumer, even though there is no direct contract between them.

हिंदी में:
लापरवाही के दावे को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि प्रतिवादी के पास वादी के प्रति एक

सावधानी का कर्तव्य हो। यह कर्तव्य उन स्थितियों में उत्पन्न होता है जहाँ प्रतिवादी के कार्य वादी को तर्कसंगत रूप से प्रभावित कर सकते हैं। यदि वादी और प्रतिवादी के बीच ऐसा कोई कर्तव्य मौजूद नहीं है, तो लापरवाही का दावा नहीं किया जा सकता, भले ही नुकसान कितना भी गंभीर क्यों न हो। यह कर्तव्य अक्सर पक्षों के बीच के संबंध और मामले के संदर्भ पर निर्भर करता है।

उदाहरण:

यदि कोई निर्माता दोषपूर्ण सामान बेचता है जिससे उपभोक्ता को चोट लगती है, तो निर्माता पर उपभोक्ता के प्रति एक कर्तव्य है, भले ही उनके बीच सीधा अनुबंध न हो।

---

7. Breach of Duty

A **breach of duty** occurs when the defendant fails to meet the standard of care that a reasonable person would have met under similar circumstances. This means the defendant's actions must be compared against what a prudent person would have done in the same situation. If the defendant’s conduct falls short of this standard, they can be said to have breached their duty of care.

Case Law Example:

- **Blyth v. Birmingham Waterworks Co. (1856)**:
  In this case, the court defined negligence as the omission to do something which a reasonable person, guided by the circumstances, would do, or doing something which a prudent and reasonable person would not do.

Illustration:
If a driver speeds through a red light and hits a pedestrian, the driver breaches their duty of care, as a reasonable person would stop at the red light to avoid harm.

हिंदी में:
कर्तव्य का उल्लंघन तब होता है जब प्रतिवादी वह स्तर की सावधानी बरतने में विफल हो जाता है जो समान परिस्थितियों में एक सामान्य व्यक्ति करता। इसका अर्थ है कि प्रतिवादी के कार्यों की तुलना उस व्यक्ति से की जाएगी जो उन्हीं परिस्थितियों में एक समझदार व्यक्ति द्वारा किए गए कार्यों से होगी। यदि प्रतिवादी का आचरण इस मानक से कमतर है, तो इसे कर्तव्य का उल्लंघन माना जाएगा।

उदाहरण:

यदि कोई चालक तेज गति से लाल बत्ती पार करता है और एक राहगीर को टक्कर मारता है, तो चालक ने अपना कर्तव्य निभाने में विफलता दिखाई है, क्योंकि एक सामान्य व्यक्ति लाल बत्ती पर रुकता।

8. Damages

In negligence cases, **damages** are awarded to compensate the plaintiff for the injury or harm suffered due to the defendant's negligence. Damages can take different forms, depending on the nature and severity of the injury. There are two main types of damages:

1. **Compensatory Damages**: These are awarded to restore the plaintiff to their original position before the negligence occurred. They cover financial losses such as medical bills, lost wages, and emotional distress.
2. **Punitive Damages**: These are awarded in cases of extreme or malicious negligence, where the defendant's conduct was particularly reckless or harmful. They aim to punish the defendant and deter similar behavior in the future.

Case Law Example:

- **Ratanlal & Dhirajlal's Law of Torts (2013)**:
  This case discusses compensatory and punitive damages in negligence cases, explaining how compensatory damages are intended to make the plaintiff whole, while punitive damages punish egregious behavior.

Illustration:
A patient suffers from long-term health issues due to a doctor's negligence during surgery. The court awards compensatory damages for medical expenses and punitive damages because the doctor's negligence was egregious.

हिंदी में:
लापरवाही के मामलों में, नुकसान वादी को हुई चोट या हानि के लिए मुआवजा देने के लिए प्रदान किए जाते हैं। नुकसान का प्रकार मामले की प्रकृति और चोट की गंभीरता पर निर्भर करता है। नुकसान मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं:

1. मुआवजा देने वाले नुकसान: ये नुकसान वादी को उसकी मूल स्थिति में बहाल करने के लिए प्रदान किए जाते हैं। इसमें चिकित्सा बिल, खोई हुई मजदूरी, और भावनात्मक तनाव जैसे वित्तीय नुकसान शामिल होते हैं।
2. दंडात्मक नुकसान: ये नुकसान उन मामलों में प्रदान किए जाते हैं जहाँ प्रतिवादी का आचरण अत्यधिक या दुर्भावनापूर्ण होता है। इसका उद्देश्य प्रतिवादी को दंडित करना और भविष्य में इस तरह के आचरण से रोकना है।

उदाहरण:

यदि एक मरीज को सर्जरी के दौरान चिकित्सक की लापरवाही के कारण दीर्घकालिक स्वास्थ्य समस्याएँ होती हैं, तो अदालत चिकित्सीय खर्चों के लिए मुआवजा देने वाले नुकसान और चिकित्सक की अत्यधिक लापरवाही के लिए दंडात्मक नुकसान प्रदान कर सकती है।

---

9. Proof of Negligence – Res Ipsa Loquitur

The doctrine of **Res Ipsa Loquitur** is a Latin phrase meaning “the thing speaks for itself.” This principle applies when the facts of the case are so obvious that negligence is inferred without needing detailed proof. Under this rule, the plaintiff does not need to provide direct evidence of how the defendant was negligent. Instead, the mere occurrence of the incident suggests that it could not have happened without some form of negligence.

Case Law Example:

- **Byrne v. Boadle (1863)**:
  A barrel of flour fell from a warehouse window, injuring the plaintiff. The court held that the defendant was negligent, even though there was no direct proof of how the barrel fell, because such an event would not have occurred without negligence.

Illustration:
If a surgeon leaves a surgical instrument inside a patient after surgery, it is clear that negligence occurred, as no reasonable doctor would leave an instrument inside the patient.

हिंदी में:
Res Ipsa Loquitur का अर्थ है "चीज़ खुद अपने लिए बोलती है"। यह सिद्धांत तब लागू होता है जब

मामले के तथ्य इतने स्पष्ट होते हैं कि बिना किसी विस्तृत प्रमाण के लापरवाही को माना जा सकता है। इस सिद्धांत के तहत, वादी को यह साबित करने की आवश्यकता नहीं होती कि प्रतिवादी ने कैसे लापरवाही की। घटना का होना ही यह इंगित करता है कि लापरवाही हुई है।

उदाहरण:

यदि सर्जरी के बाद सर्जन मरीज के शरीर के अंदर एक सर्जिकल उपकरण छोड़ देता है, तो यह स्पष्ट है कि लापरवाही हुई है, क्योंकि कोई भी समझदार चिकित्सक ऐसा नहीं करेगा।

---

10. Nervous Shock

Nervous shock refers to a psychiatric illness or severe emotional distress suffered due to the defendant's negligence. The shock must be a direct result of the negligence and must manifest in a recognized psychiatric illness, such as depression or post-traumatic stress disorder (PTSD). Merely feeling distressed is not enough to claim damages; the plaintiff must show a genuine medical condition resulting from the shock.

Case Law Example:

- **Alcock v. Chief Constable of South Yorkshire Police (1992)**:
  In this case, the court laid down specific rules regarding claims for nervous shock, including the need for a close relationship between the claimant and the victim, and that the shock must be sudden.

Illustration:
A bystander witnesses a severe car accident where their close family member is seriously injured. If they suffer from PTSD as a result, they may be able to claim damages for nervous shock.

हिंदी में:
नर्वस शॉक से तात्पर्य मानसिक बीमारी या गंभीर भावनात्मक तनाव से है जो प्रतिवादी की लापरवाही के कारण उत्पन्न होता है। शॉक प्रत्यक्ष रूप से लापरवाही का परिणाम होना चाहिए और इसे एक मान्यता प्राप्त मानसिक बीमारी के रूप में प्रकट होना चाहिए, जैसे कि अवसाद या पोस्ट-ट्रॉमेटिक स्ट्रेस डिसऑर्डर (PTSD)। केवल भावनात्मक तनाव महसूस करना मुआवजा पाने के लिए पर्याप्त नहीं

है; वादी को यह दिखाना होगा कि शॉक के परिणामस्वरूप एक वास्तविक चिकित्सा स्थिति उत्पन्न हुई है।

उदाहरण:

यदि कोई व्यक्ति एक गंभीर कार दुर्घटना देखता है जिसमें उसका करीबी परिवार का सदस्य गंभीर रूप से घायल हो जाता है और इसके परिणामस्वरूप उसे PTSD हो जाता है, तो वह नर्वस शॉक के लिए मुआवजा मांग सकता है।

Consumer Protection Act, 2019- (with links in blue)

Synopsis

1. Introduction
2. Meaning of the word 'consumer'
3. Need for the Consumer Protection Act, 2019
4. Objective of the Consumer Protection Act, 2019
5. What are consumer rights under Consumer Protection Act, 2019
6. What are unfair trade practices under Consumer Protection Act, 2019
7. Changes incorporated in Consumer Protection Act, 2019
8. Essential provisions of Consumer Protection Act, 2019
    a. Consumer Protection Councils
        i. Central Consumer Protection Council
        ii. State Consumer Protection Councils

iii. District Consumer Protection Council
b. Central Consumer Protection Authority
i. Functions and duties of the Central Authority
c. Consumer disputes redressal commission
d. Mediation
e. Product liability
i. Liability of product manufacturer
ii. Liability of product service provider
iii. Liability of product seller
iv. Exceptions to product liability
9. Offences and penalties under Consumer Protection Act, 2019
10. How do consumers benefit from Consumer Protection Act, 2019
11. Landmark case laws
a. Horlicks Ltd. v. Zydus Wellness Products Ltd. (2020)
b. Veena Khanna v. Ansal Properties & Industries Ltd, NCDRC (2007)
c. Sapient Corporation Employees v. Hdfc Bank Ltd. & Ors. (2012)
12. Conclusion

Introduction

Consumer protection is the practice of safeguarding buyers of goods and services against unfair practices in the market. It refers to the steps adopted for the protection of consumers from corrupt and unscrupulous malpractices by the sellers, manufacturers, service providers, etc. and to provide remedies in case their rights as a consumer have been violated.

In India, the protection of the rights of the consumers is administered by the Consumer Protection Act, 2019. The Consumer Protection Act, 2019 was introduced to replace the Consumer Protection Act, 1986. The new Act contains various provisions which incorporate the challenges faced by modern and technology-dependent consumers. The

Act also contains various provisions for the protection and promoting the rights of the consumers.

Meaning of the word 'consumer'

A consumer is an individual or group of individuals who purchase goods and services for their own personal use and not for the purpose of manufacturing or resale. Section 2(7) of the Consumer Protection Act, 2019 defines a consumer as any person who buys goods or services in exchange for consideration and utilises such goods and services for personal use and for the purpose of resale or commercial use. In the explanation of the definition of consumer, it has been distinctly stated that the term 'buys any goods' and 'hires or avails any services' also includes all online transactions conducted through electronic means or direct selling or teleshopping or multi-level marketing.

Need for the Consumer Protection Act, 2019

The Consumer Protection Act, 2019 was enacted by the Indian legislature to deal with matters relating to violation of consumer's rights, unfair trade practices, misleading advertisements, and all those circumstances which are prejudicial to the consumer's rights. The intention of the Parliament behind enacting the Act was to include provisions for e-consumers due to the development of technology, buying and selling of goods and services online have considerably increased during the last few years.

The Act seeks to provide better protection of the rights and interests of the consumers by establishing Consumer Protection Councils to settle disputes in case any dispute arises and to provide adequate compensation to the consumers in case their rights have been infringed. It further provides speedy and effective disposal of consumer complaints through alternate dispute resolution mechanisms. The Act also promotes consumer education in order to educate the consumer about their rights, responsibilities and also redressing their grievances.

Objective of the Consumer Protection Act, 2019

The main objective of the Act is to protect the interests of the consumers and to establish a stable and strong mechanism for the settlement of consumer disputes. The Act aims to:

1. Protect against the marketing of products that are hazardous to life and property.
2. Inform about the quality, potency, quantity, standard, purity, and price of goods to safeguard the consumers against unfair trade practices.
3. Establish Consumer Protection Councils for protecting the rights and interests of the consumers.
4. Assure, wherever possible, access to an authority of goods at competitive prices.
5. Seek redressal against unfair trade practices or unscrupulous exploitation of consumers.
6. Protect the consumers by appointing authorities for timely and sufficient administration and settlement of consumers' disputes.
7. Lay down the penalties for offences committed under the Act.
8. Hear and ensure that consumers' welfare will receive due consideration at appropriate forums in case any problem or dispute arises.
9. Provide consumer education, so that the consumers are able to be aware of their rights.
10. Provide speedy and effective disposal of consumer complaints through alternate dispute resolution mechanisms.

What are consumer rights under Consumer Protection Act, 2019

There exist six rights of a consumer under the Consumer Protection Act, 2019. The rights of the consumers are mentioned under Section 2(9) of the Act, which are as follows:

1. The right of a consumer to be protected from the marketing of goods and services that are hazardous and detrimental to life and property.
2. The right of a consumer to be protected against unfair trade practices by being aware of the quality, quantity, potency, purity, standard and price of goods, products or services.
3. The right of a consumer to have access to a variety of goods, services and products at competitive prices.
4. The right to seek redressal at respective forums against unfair and restrictive trade practices.
5. The right to receive adequate compensation or consideration from respective consumer forums in case they have been wronged by the seller.
6. The right to receive consumer education.

What are unfair trade practices under Consumer Protection Act, 2019

Section 2(47) of the Consumer Protection Act, 2019 defines the term 'unfair trade practices' which include:

1. Manufacturing spurious goods or providing defective services.
2. Not issuing cash memos or bills for the goods purchased or services rendered.
3. Refusing to take back or withdraw the goods or services and not refunding the consideration taken for the purchase of the goods or services.
4. Disclosing the personal information of the consumer.

Changes incorporated in Consumer Protection Act, 2019

The changes that were incorporated with the enactment of the Consumer Protection Act, 2019 are:

1. The District Commissions will have the jurisdiction to entertain complaints where the value of the goods, services or products paid as consideration to the seller does not exceed 50 lakh rupees.

2. State Commissions will have the jurisdiction to entertain complaints where the value of the goods, services or products paid as consideration to the seller exceeds 50 lakh rupees but does not exceed two crore rupees.
3. The National Commission will have the jurisdiction to entertain complaints where the value of the goods, services or products paid as consideration to the seller exceeds two crore rupees.
4. The Act further states that every complaint concerning consumer dispute shall be disposed of as expeditiously as possible. A complaint filed under this Act shall be decided within the period of three months from the date of receipt of notice by the opposite party in the cases the complaint does not require analysis or testing of the goods and services and within a period of 5 months, if it requires analysis or testing of the goods and services.
5. The Consumer Protection Act, 2019 also facilitates the consumers to file complaints online. In this regard, the Central Government has set up the E-Daakhil Portal, which provides a convenient, speedy and inexpensive facility to the consumers all over India so that they are able to approach the relevant consumer forums in case of any dispute arises.
6. The Act lays down the scope for e-commerce and direct selling.
7. The Consumer Protection Act, 2019 lays down provisions for mediation and alternative dispute resolution so that the parties are able to dispose of the case conveniently without going through the trouble of litigation.
8. The Consumer Protection Act, 2019 contains provisions for product liability, unfair contracts and it also includes three new unfair trade practices. In contrast, the old Act just stated six types of unfair trade practices.
9. The Act of 2019 acts as the advisory body for the promotion and protection of consumer rights.
10. Under the Consumer Protection Act, 2019 there is no scope for selection committees, the Act authorises the Central Government to appoint the members.

Therefore, with the changes in the digital era, the Indian Parliament enacted and brought the Consumer Protection Act, 2019 in force to include the provisions for e-commerce as digitalization has facilitated convenient payment mechanisms, variety of choices, improved services, etc.

Essential provisions of Consumer Protection Act, 2019

The essential provisions of the Consumer Protection Act, 2019 are:

Consumer Protection Councils

The Act establishes consumer protection councils to protect the rights of the consumers at both the national and state levels.

Central Consumer Protection Council

Under Chapter 2 Section 3 of the Consumer Protection Act, 2019 the Central Government shall establish the Central Consumer Protection Council which is known as the Central Council. It is an advisory body and the Central Council must consist of the following members;

1. The Minister-in-charge of the Department of Consumer Affairs in the Central Government will be appointed as the chairperson of the council, and
2. Any number of official or non-official members representing necessary interests under the Act.

The Central Council may meet as and when necessary, however, they must hold at least one meeting every year. The purpose of the Central Council is to protect and promote the interests of the consumers under the Act.

State Consumer Protection Councils

Every state government shall establish a State Consumer Protection Council known as the State Council having jurisdiction over that particular state. The State Council acts as an advisory body. The members of the State Council are:

1. The Minister-in-charge of the Consumer Affairs in the State Government will be appointed as the chairperson of the council,
2. Any number of official or non-official members representing necessary interests under the Act, and
3. The Central Government may also appoint not less than ten members for the purposes of this Act.

The State Councils must hold at least two meetings every year.

District Consumer Protection Council

Under Section 8 of the Act, the state government shall establish a District Consumer Protection Council for every district known as the District Council. The members of the District Council are:

1. The collector of that district will be appointed as the Chairperson of the District Council, and
2. Any other members representing necessary interests under the Act.

Central Consumer Protection Authority

The Central Government shall establish a Central Consumer Protection Authority which is known as the Central Authority under Section 10 of the Consumer Protection Act, 2019, to regulate matters relating to violation of the rights of consumers, unfair trade practices and false or misleading advertisements which are prejudicial to the interests of the public and consumers and to promote, protect and enforce the rights of consumers. The Central Government will appoint the Chief Commissioner and the other Commissioners of the Central Authority as required under the Act.

The Central Authority must have an 'Investigative Wing' under Section 15 of the Act to conduct an inquiry or investigation. The investigative wing must comprise of the Director-General and the required number of Additional Director-General, Director, Joint Director, Deputy Director and Assistant Director possessing the required experience and qualifications to carry out the functions under this Act.

Functions and duties of the Central Authority

The functions and responsibilities of the Central Authority are laid down in Section 18 of the Act which includes;

1. To protect and promote the rights of the consumers as a class and to prevent violation of consumer rights,
2. To prevent unfair trade practices,
3. To ensure no false or misleading advertisements regarding any goods or services are promoted,
4. To ensure no person takes part in false or misleading advertisements,
5. Inquire or investigate in cases of violation of consumer rights or unfair trade practices.
6. File complaints before the National, State or District Commission as the case may be,
7. To review matters relating to the factors hindering the enjoyment of consumer rights.
8. To recommend the adoption of international covenants and best international practices concerning consumer rights
9. Promote research and awareness of consumer rights.
10. Lay down necessary guidelines to prevent unfair trade practices and protect the interests of the consumers.

Furthermore, the Central Authority also has the power to investigate after receiving any complaint or directions from the Central Government or of its own motion in cases where there is an infringement of consumer rights or unfair trade practices are carried out. And if the Central Authority is satisfied that infringement of consumer rights or unfair trade practices has occurred then it may:

- Recall the goods or services which are hazardous and detrimental to the consumers,
- Reimburse the prices of the goods and services to the consumers, and
- Discontinue the practices that are prejudicial and harmful to the consumers.

Under Section 21 of the Act, the Central Authority is authorised to issue directions to false and misleading advertisements which may extend to ten lakh rupees. While determining the penalty of the offence the Central Authority must keep in mind factors such as; the population affected by the offence, frequency of the offence and gross revenue from the sales of such product. The Central Authority can also direct search and seizure for the purposes of this Act and in that case the provisions of the Criminal Procedure Code, 1973 will apply.

Consumer disputes redressal commission

The state government shall establish a District Consumer Disputes Redressal Commission, known as the District Commission in each district of the state under the Consumer Protection Act, 2019. The District Commission shall comprise of a President and not less than two members prescribed by the Central Government.

Section 34 of the Act authorises the District Commission to entertain complaints where the value of the goods or services paid as consideration does not exceed one crore rupees. The complaint relating to goods and services can be filed to the District Commission by the consumer, recognized consumer association, Central Government, Central Authority, State Government, etc.

Section 36 states that all the proceedings before the District Commission shall be conducted by the President and at least one member of the commission.

Mediation

Chapter 5 Section 74 of the Consumer Protection Act, 2019 states that a Consumer Mediation Cell shall be established by the Central Government at the national level and every state government shall establish Consumer Mediation Cell exercising within the jurisdiction of that state. The mediator nominated to carry out the mediation shall conduct it within such time and in such manner as may be specified by regulations.

Section 75 of the Act talks about the empanelment of the mediators. It states the qualifications, terms and conditions of service, the procedure for appointing, and the fee payable to the empanelled mediators.

It is the duty of the mediator to disclose certain facts such as; any personal, financial or professional in the result of the consumer dispute, the circumstances giving rise to their independence or impartiality and any other necessary information for the protection of consumer rights.

Product liability

Under Section 83 of the Act, a product liability action may be brought by a complainant against a product manufacturer, product service provider or product seller.

Liability of product manufacturer

A product manufacturer will be held liable in a product liability action under the following circumstances:

- The product contains manufacturing defects.
- The product is defective.
- There is a deviation from manufacturing specifications.
- The product does not conform to the express warranty.
- The product fails to contain adequate information for proper usage.

Liability of product service provider

A product service provider will be held liable in a product liability action under the following circumstances:

- The service provider will be responsible when the service provided by them is faulty or imperfect.
- There was an act of negligence on their part.
- The service provider failed to issue adequate instructions and warnings for the services.

- The service provider failed to conform to the express warranty or terms and conditions of the contract.

Liability of product seller

A product seller will be held liable in a product liability action under the following circumstances:

- They altered or modified the product which resulted in being detrimental to the consumer.
- They failed to exercise reasonable care in assembling, inspecting or maintaining such product
- They exercised substantial control over the product which resulted in causing harm to the consumer.

Exceptions to product liability

There are certain exceptions to product liability action mentioned in Section 87 of the Act, such as;

- The product was altered, modified or misused by the consumer,
- A consumer cannot bring product liability action when the manufacturer has given adequate warnings and instructions for the use of the product,
- The manufacturer would not be liable in case of a product liability action for not warning about any danger that is commonly known to the general public.

Offences and penalties under Consumer Protection Act, 2019

The offences and penalties listed under this Act are mentioned as follows.

1. Punishment for false and misleading advertisements: Under Section 89 of the Act any manufacturer or service provider who promotes false or misleading advertisements will be punished with imprisonment for a term that may extend to two years and with fine that may extend to ten lakh rupees.
2. Punishment for manufacturing, selling, distributing products containing adulterants: Under Section 90 of the Consumer Protection Act, 2019 any person

who sells, manufactures, distributes products containing adulterants shall be penalised in case of the following circumstances;

- If the adulterated product does not cause any injury to the consumer then the term for imprisonment will extend to a period of six months and fine which may extend to one lakh rupees,
- If the product containing adulterant causes injury not amounting to grievous hurt then the term for imprisonment will extend to a period of one year and fine which may extend to three lakh rupees,
- If the product containing adulterant causes injury amounting to grievous hurt then the term for imprisonment will extend to a period of seven years and fine which may extend to five lakh rupees,
- If the product results in causing death to the consumer then the term for imprisonment will be for a period of seven years which may extend to life imprisonment and fine not less than ten lakh rupees.

3. Punishment for manufacturing, selling, and distributing spurious products: Section 91 states that any person who sells, manufactures, or distributes spurious products shall be punished for such acts.

How do consumers benefit from Consumer Protection Act, 2019

The Consumer Protection Act, 2019 is a significant piece of legislation brought as it is beneficial for the consumers. The Act widens the scope of protection regarding the rights and interests of consumers.

1. Unfair contracts: The Act introduced 'unfair contract' under Section 2(46) of the Act, which includes contracts requiring excessive security deposits to be given by the consumer for the performance of contractual obligations. However, the inclusion of unfair contracts in the Act would enable the consumer to file complaints in such cases and would also keep the fraudulent businesses in check.

2. Territorial jurisdiction: The Act enables the consumers to file complaints where the complainant resides or personally works for gain thus it would benefit the consumers in seeking redressal for their grievances when their rights have been violated.
3. False and misleading advertisements: The Act defines the term ‘false and misleading advertisements’ and also lays down strict penalties for such acts or omissions.
4. Product liability: The term ‘product liability’ has been defined by this Act, which states that it is the duty of the product manufacturer, service provider or seller to compensate for any harm caused to a consumer by such defective product manufactured or service provided to the consumer.
5. Mediation and alternative dispute resolution: The Act enables the consumer to opt for mediation and alternative dispute resolution mechanisms for speedy and effective settlement of consumer disputes.
6. E-filing of complaints: The Act also facilitates e-filling of the complaints and seeking video conference hearings by the Commission. Thus, providing convenient means for the consumers to voice their grievances.

Landmark case laws

Horlicks Ltd. v. Zydus Wellness Products Ltd. (2020)

In this case, both parties are manufacturers of nutritional drinks, however, Zydus advertised a television commercial trivialising the products of Horlicks Ltd. The commercial was being telecasted in various languages including English, Tamil and Bengali. Therefore, the Delhi High Court relied on various judgments on misleading advertisements, disparagement and law governing the publication of advertisements on television and held that the advertisement is disparaging as it does not provide any concrete proof regarding the quality of the product. Further, electronic media leaves an impression on the minds of the viewers

thus, these types of advertisements would not only be detrimental to the consumers but also the complainant would suffer irreparable damage.

A famous judgement relied on by Delhi High Court while deciding this case is ***Pepsi Co. Inc. v. Hindustan Coca Cola Ltd., 2003*** where the Delhi High Court held that there are certain important factors that are to be kept in mind in case of disparagement which are; manner of the commercial, intent of the commercial and storyline of the commercial.

Veena Khanna v. Ansal Properties & Industries Ltd, NCDRC (2007)

In this case, the complainant offered to purchase a flat from the respondent which the respondent agreed to deliver on 1.6.1999 through a letter. However, the flat was not constructed within the specified date and hence it was not delivered. For such deficiency in services, the complainant demanded the refund of the deposited amount with interest at the rate of 18% pa which was refused by the opposite party.

The National Commission observed that due to delays in construction and delivery of possession it is quite difficult for a consumer to purchase a flat at market price. The National Commission stated that it is the duty of the State Commission to direct the builders to deliver the possession of the flat as soon as it is completed and the complainant should be awarded suitable compensation for the delay in construction. The complainant just claimed the refund amount before the State Commission, but the case was pending before the commission for five years and during that time there was a tremendous rise in the market prices of the immovable property. The National Commission further stated that it was the duty of the State Commission to direct the respondents to deliver the possession of the flat or any other flat of equivalent size to the complainant with appropriate compensation, due to the delay in delivering the possession within the specified time. Or, adequate compensation ought to have been provided to the complainant so that they could purchase a new flat of the same size at the prevailing market rate in that same locality.

Sapient Corporation Employees v. Hdfc Bank Ltd. & Ors. (2012)

In this case, a consumer complaint was filed by Sapient Corporation Employees Provident Fund Trust against HDFC bank Ltd. The complainant claimed that OP-Bank has committed deficiency of services by debiting the account of the Complainant. The court in this case held that there was no deficiency of service on the part of OP-bank and the arguments contented by the complainant are baseless. A behaviour that conforms to the direction of regulatory authority cannot be said to be negligence or service deficiency.

Conclusion

The Consumer Protection Act, 2019 is a modified piece of legislation that offers the consumers a great variety of benefits and rights to protect them from unfair trade practices, false or misleading advertisements, etc. The Act enables the consumers to seek alternative dispute resolution mechanisms and mediation so that the parties can opt for speedy and effective settlement of consumer disputes. The scope of e-filing of complaints and e-consumers in the Act portrays forward-thinking in part of the legislature. Furthermore, the Act also introduced new terms such as product liability, unfair contracts, etc. thereby widening the scope of protection of consumer rights and enabling the consumers to file complaints when their rights have been violated under the Act.

Thus, the inclusion of the provisions in this fills up the lacunae in the Consumer Protection Act, 1986. The enactment of the Act was paramount and it changed the ambit of protecting the rights of consumers in the country.

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019-(यह संस्करण नीले रंग में लिंक्स के साथ उपलब्ध है जिस पर क्लिक कर किसी क़ानून या केस लॉ का उपयोग किया जा सकता है।)

विषयसूची

1. परिचय
2. 'उपभोक्ता' शब्द का अर्थ
3. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 की आवश्यकता
4. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 का उद्देश्य
5. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत उपभोक्ता अधिकार क्या हैं?
6. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत अनुचित व्यापार प्रथाएँ क्या हैं?
7. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 में किये गये परिवर्तन
8. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के आवश्यक प्रावधान
    a. उपभोक्ता संरक्षण परिषदें
        i. केंद्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद
        ii. राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषदें
        iii. जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषद
    b. केंद्रीय उपभोक्ता संरक्षण प्राधिकरण
        i. केंद्रीय प्राधिकरण के कार्य और कर्तव्य
    c. उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग
    d. मध्यस्थता
    e. उत्पाद दायित्व
        i. उत्पाद निर्माता का दायित्व
        ii. उत्पाद सेवा प्रदाता का दायित्व
        iii. उत्पाद विक्रेता का दायित्व
        iv. उत्पाद दायित्व के अपवाद
9. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत अपराध और दंड
10. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 से उपभोक्ताओं को कैसे लाभ होगा?
11. ऐतिहासिक मामले कानून
    a. हॉर्लिक्स लिमिटेड बनाम ज़ाइडस वेलनेस प्रोडक्ट्स लिमिटेड (2020)
    b. वीना खन्ना बनाम अंसल प्रॉपर्टीज एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड, एनसीडीआरसी (2007)
    c. सैपिएंट कॉर्पोरेशन एम्प्लॉइज बनाम एचडीएफसी बैंक लिमिटेड एवं अन्य (2012)
12. निष्कर्ष

परिचय

उपभोक्ता संरक्षण बाजार में अनुचित व्यवहारों के खिलाफ वस्तुओं और सेवाओं के खरीदारों की सुरक्षा करने का अभ्यास है। यह विक्रेताओं, निर्माताओं, सेवा प्रदाताओं आदि द्वारा भ्रष्ट और बेईमान कदाचार से उपभोक्ताओं की सुरक्षा के लिए उठाए गए कदमों को संदर्भित करता है और उपभोक्ता के रूप में उनके अधिकारों का उल्लंघन होने की स्थिति में उपचार प्रदान करता है।

भारत में उपभोक्ताओं के अधिकारों की सुरक्षा उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 द्वारा की जाती है । उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के स्थान पर पेश किया गया था । नए अधिनियम में विभिन्न प्रावधान शामिल हैं जो आधुनिक और प्रौद्योगिकी पर निर्भर उपभोक्ताओं के सामने आने वाली चुनौतियों को शामिल करते हैं। अधिनियम में उपभोक्ताओं के अधिकारों की सुरक्षा और संवर्धन के लिए विभिन्न प्रावधान भी शामिल हैं।

'उपभोक्ता' शब्द का अर्थ

उपभोक्ता एक व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह है जो अपने निजी इस्तेमाल के लिए सामान और सेवाएँ खरीदते हैं, न कि विनिर्माण या पुनर्विक्रय के उद्देश्य से। उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 की धारा 2(7) उपभोक्ता को ऐसे किसी भी व्यक्ति के रूप में परिभाषित करती है जो विचार के बदले में सामान या सेवाएँ खरीदता है और ऐसे सामान और सेवाओं का इस्तेमाल निजी इस्तेमाल और पुनर्विक्रय या व्यावसायिक इस्तेमाल के लिए करता है। उपभोक्ता की परिभाषा के स्पष्टीकरण में, यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि 'कोई भी सामान खरीदना' और 'कोई भी सेवा किराए पर लेना या लेना' शब्द में इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों या प्रत्यक्ष बिक्री या टेलीशॉपिंग या मल्टी-लेवल मार्केटिंग के माध्यम से किए गए सभी ऑनलाइन लेनदेन भी शामिल हैं।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 की आवश्यकता

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 को भारतीय विधानमंडल द्वारा उपभोक्ता अधिकारों के उल्लंघन, अनुचित व्यापार प्रथाओं, भ्रामक विज्ञापनों और उन सभी परिस्थितियों से निपटने के लिए अधिनियमित किया गया था जो उपभोक्ता के अधिकारों के लिए हानिकारक हैं। अधिनियम को अधिनियमित करने के पीछे संसद का उद्देश्य ई-उपभोक्ताओं के लिए प्रावधान शामिल करना था क्योंकि प्रौद्योगिकी के विकास के कारण पिछले कुछ वर्षों के दौरान ऑनलाइन वस्तुओं और सेवाओं की खरीद और बिक्री में काफी वृद्धि हुई है।

यह अधिनियम उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की स्थापना करके उपभोक्ताओं के अधिकारों और हितों की बेहतर सुरक्षा प्रदान करने का प्रयास करता है, ताकि किसी भी विवाद की स्थिति में विवादों का निपटारा किया जा सके और उपभोक्ताओं के अधिकारों का उल्लंघन होने की स्थिति में उन्हें पर्याप्त मुआवजा प्रदान किया जा सके।

यह वैकल्पिक विवाद समाधान तंत्रों के माध्यम से उपभोक्ता शिकायतों का त्वरित और प्रभावी निपटान भी प्रदान करता है। यह अधिनियम उपभोक्ताओं को उनके अधिकारों, जिम्मेदारियों और उनकी शिकायतों के निवारण के बारे में शिक्षित करने के लिए उपभोक्ता शिक्षा को भी बढ़ावा देता है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 का उद्देश्य

अधिनियम का मुख्य उद्देश्य उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करना तथा उपभोक्ता विवादों के निपटारे के लिए एक स्थिर और मजबूत तंत्र स्थापित करना है। अधिनियम का उद्देश्य है:

1. ऐसे उत्पादों के विपणन से सुरक्षा करें जो जीवन और संपत्ति के लिए खतरनाक हैं।
2. अनुचित व्यापार प्रथाओं के खिलाफ उपभोक्ताओं की सुरक्षा के लिए वस्तुओं की गुणवत्ता, क्षमता, मात्रा, मानक, शुद्धता और मूल्य के बारे में जानकारी देना।
3. उपभोक्ताओं के अधिकारों और हितों की रक्षा के लिए उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की स्थापना करना।
4. जहां भी संभव हो, प्रतिस्पर्धी मूल्यों पर वस्तुओं की उपलब्धता सुनिश्चित करें।
5. अनुचित व्यापार प्रथाओं या उपभोक्ताओं के बेईमानी से शोषण के विरुद्ध निवारण की मांग करना।
6. उपभोक्ता विवादों के समय पर और पर्याप्त प्रशासन और निपटान के लिए प्राधिकारियों की नियुक्ति करके उपभोक्ताओं की सुरक्षा करना।
7. अधिनियम के अंतर्गत किए गए अपराधों के लिए दंड निर्धारित करना।
8. सुनवाई करें और सुनिश्चित करें कि किसी भी समस्या या विवाद की स्थिति में उचित मंचों पर उपभोक्ताओं के कल्याण पर उचित विचार किया जाएगा।
9. उपभोक्ता शिक्षा प्रदान करें, ताकि उपभोक्ता अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो सकें।
10. वैकल्पिक विवाद समाधान तंत्र के माध्यम से उपभोक्ता शिकायतों का त्वरित एवं प्रभावी निपटान करना।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत उपभोक्ता अधिकार क्या हैं?

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत उपभोक्ता के छह अधिकार मौजूद हैं । अधिनियम की **धारा 2(9)** के तहत उपभोक्ताओं के अधिकारों का उल्लेख किया गया है , जो इस प्रकार हैं:

1. उपभोक्ता का अधिकार है कि उसे ऐसी वस्तुओं और सेवाओं के विपणन से बचाया जाए जो जीवन और संपत्ति के लिए खतरनाक और हानिकारक हैं।
2. उपभोक्ता को वस्तुओं, उत्पादों या सेवाओं की गुणवत्ता, मात्रा, क्षमता, शुद्धता, मानक और मूल्य के बारे में जानकारी होने के कारण अनुचित व्यापार प्रथाओं के विरुद्ध संरक्षण पाने का अधिकार।
3. प्रतिस्पर्धी कीमतों पर विभिन्न प्रकार की वस्तुओं, सेवाओं और उत्पादों तक पहुंच का उपभोक्ता का अधिकार।
4. अनुचित एवं प्रतिबंधात्मक व्यापार प्रथाओं के विरुद्ध संबंधित मंचों पर निवारण मांगने का अधिकार।
5. विक्रेता द्वारा उनके साथ गलत व्यवहार किए जाने की स्थिति में संबंधित उपभोक्ता फोरम से पर्याप्त मुआवजा या प्रतिफल प्राप्त करने का अधिकार।
6. उपभोक्ता शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार.

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत अनुचित व्यापार प्रथाएँ क्या हैं?

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 की धारा **2(47)** 'अनुचित व्यापार प्रथाओं' शब्द को परिभाषित करती है जिसमें शामिल हैं:

1. नकली सामान बनाना या दोषपूर्ण सेवाएं प्रदान करना।
2. खरीदे गए सामान या प्रदान की गई सेवाओं के लिए कैश मेमो या बिल जारी न करना।
3. माल या सेवाओं को वापस लेने या वापस लेने से इनकार करना तथा माल या सेवाओं की खरीद के लिए ली गई राशि वापस न करना।
4. उपभोक्ता की व्यक्तिगत जानकारी का खुलासा करना।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 में किये गये परिवर्तन

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के अधिनियमन के साथ शामिल किए गए परिवर्तन इस प्रकार हैं:

1. जिला आयोगों को उन शिकायतों पर विचार करने का क्षेत्राधिकार होगा जहां विक्रेता को प्रतिफल के रूप में भुगतान की गई वस्तुओं, सेवाओं या उत्पादों का मूल्य 50 लाख रुपये से अधिक नहीं है।

2. राज्य आयोगों को उन शिकायतों पर विचार करने का क्षेत्राधिकार होगा जहां विक्रेता को भुगतान किए गए माल, सेवाओं या उत्पादों का मूल्य 50 लाख रुपये से अधिक है, परंतु दो करोड़ रुपये से अधिक नहीं है।
3. राष्ट्रीय आयोग को उन शिकायतों पर विचार करने का क्षेत्राधिकार होगा जहां विक्रेता को प्रतिफल के रूप में भुगतान की गई वस्तुओं, सेवाओं या उत्पादों का मूल्य दो करोड़ रुपये से अधिक है।
4. अधिनियम में आगे कहा गया है कि उपभोक्ता विवाद से संबंधित प्रत्येक शिकायत का यथासंभव शीघ्रता से निपटारा किया जाएगा। इस अधिनियम के तहत दायर की गई शिकायत का निपटारा विपरीत पक्ष द्वारा नोटिस प्राप्त होने की तिथि से तीन महीने की अवधि के भीतर किया जाएगा, यदि शिकायत में वस्तुओं और सेवाओं के विश्लेषण या परीक्षण की आवश्यकता नहीं है और यदि इसमें वस्तुओं और सेवाओं के विश्लेषण या परीक्षण की आवश्यकता है, तो 5 महीने की अवधि के भीतर निपटारा किया जाएगा।
5. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 उपभोक्ताओं को ऑनलाइन शिकायत दर्ज करने की सुविधा भी प्रदान करता है। इस संबंध में, केंद्र सरकार ने ई-दाखिल पोर्टल की स्थापना की है , जो पूरे भारत में उपभोक्ताओं को सुविधाजनक, त्वरित और सस्ती सुविधा प्रदान करता है ताकि वे किसी भी विवाद की स्थिति में संबंधित उपभोक्ता फोरम से संपर्क कर सकें।
6. अधिनियम में ई-कॉमर्स और प्रत्यक्ष बिक्री के लिए दायरे का निर्धारण किया गया है।
7. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 में मध्यस्थता और वैकल्पिक विवाद समाधान के प्रावधान किए गए हैं, ताकि पक्षकार मुकदमेबाजी की परेशानी से गुजरे बिना सुविधाजनक ढंग से मामले का निपटारा कर सकें।
8. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 में उत्पाद दायित्व, अनुचित अनुबंधों के लिए प्रावधान हैं और इसमें तीन नए अनुचित व्यापार व्यवहार भी शामिल हैं। इसके विपरीत, पुराने अधिनियम में सिर्फ़ छह तरह के अनुचित व्यापार व्यवहार बताए गए थे।
9. 2019 का अधिनियम उपभोक्ता अधिकारों के संवर्धन और संरक्षण के लिए सलाहकार निकाय के रूप में कार्य करता है।
10. उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत चयन समितियों की कोई गुंजाइश नहीं है, अधिनियम केंद्र सरकार को सदस्यों की नियुक्ति के लिए अधिकृत करता है।

इसलिए, डिजिटल युग में बदलाव के साथ, भारतीय संसद ने ई-कॉमर्स के प्रावधानों को शामिल करने के लिए उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 को अधिनियमित और लागू किया क्योंकि डिजिटलीकरण ने सुविधाजनक भुगतान तंत्र, विकल्पों की विविधता, बेहतर सेवाओं आदि की सुविधा प्रदान की है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के आवश्यक प्रावधान

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के आवश्यक प्रावधान हैं:

उपभोक्ता संरक्षण परिषदें

यह अधिनियम राष्ट्रीय और राज्य दोनों स्तरों पर उपभोक्ताओं के अधिकारों की रक्षा के लिए उपभोक्ता संरक्षण परिषदों की स्थापना करता है।

केंद्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के अध्याय 2 धारा 3 के तहत केंद्र सरकार केंद्रीय उपभोक्ता संरक्षण परिषद की स्थापना करेगी जिसे केंद्रीय परिषद के रूप में जाना जाता है। यह एक सलाहकार निकाय है और केंद्रीय परिषद में निम्नलिखित सदस्य शामिल होने चाहिए;

1. केन्द्र सरकार में उपभोक्ता मामले विभाग के प्रभारी मंत्री को परिषद का अध्यक्ष नियुक्त किया जाएगा, और
2. अधिनियम के अंतर्गत आवश्यक हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले किसी भी संख्या में सरकारी या गैर-सरकारी सदस्य।

केंद्रीय परिषद आवश्यकता पड़ने पर बैठक कर सकती है, हालांकि, उन्हें हर साल कम से कम एक बैठक अवश्य करनी चाहिए। केंद्रीय परिषद का उद्देश्य अधिनियम के तहत उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करना और उन्हें बढ़ावा देना है।

राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषदें

प्रत्येक राज्य सरकार एक राज्य उपभोक्ता संरक्षण परिषद की स्थापना करेगी जिसे राज्य परिषद के रूप में जाना जाता है जिसका अधिकार क्षेत्र उस विशेष राज्य पर होगा। राज्य परिषद एक सलाहकार निकाय के रूप में कार्य करती है। राज्य परिषद के सदस्य हैं:

1. राज्य सरकार में उपभोक्ता मामलों के प्रभारी मंत्री को परिषद का अध्यक्ष नियुक्त किया जाएगा।
2. अधिनियम के अंतर्गत आवश्यक हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले किसी भी संख्या में सरकारी या गैर-सरकारी सदस्य, तथा

3. केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए कम से कम दस सदस्यों की नियुक्ति भी कर सकेगी।

राज्य परिषदों को प्रत्येक वर्ष कम से कम दो बैठकें आयोजित करनी होंगी।

जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषद

अधिनियम की धारा 8 के तहत , राज्य सरकार प्रत्येक जिले के लिए एक जिला उपभोक्ता संरक्षण परिषद स्थापित करेगी जिसे जिला परिषद के रूप में जाना जाता है। जिला परिषद के सदस्य हैं:

1. उस जिले के कलेक्टर को जिला परिषद का अध्यक्ष नियुक्त किया जाएगा, और
2. अधिनियम के अंतर्गत आवश्यक हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले अन्य सदस्य।

केंद्रीय उपभोक्ता संरक्षण प्राधिकरण

केंद्र सरकार एक केंद्रीय उपभोक्ता संरक्षण प्राधिकरण की स्थापना करेगी जिसे उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 की धारा 10 के तहत केंद्रीय प्राधिकरण के रूप में जाना जाता है, ताकि उपभोक्ताओं के अधिकारों के उल्लंघन, अनुचित व्यापार प्रथाओं और झूठे या भ्रामक विज्ञापनों से संबंधित मामलों को विनियमित किया जा सके जो जनता और उपभोक्ताओं के हितों के लिए हानिकारक हैं और उपभोक्ताओं के अधिकारों को बढ़ावा देने, उनकी रक्षा करने और उन्हें लागू करने के लिए। केंद्र सरकार अधिनियम के तहत आवश्यकतानुसार केंद्रीय प्राधिकरण के मुख्य आयुक्त और अन्य आयुक्तों की नियुक्ति करेगी।

अधिनियम की धारा 15 के तहत केंद्रीय प्राधिकरण के पास जांच या अन्वेषण करने के लिए एक 'जांच विंग' होना चाहिए। जांच विंग में महानिदेशक और अपेक्षित संख्या में अतिरिक्त महानिदेशक, निदेशक, संयुक्त निदेशक, उप निदेशक और सहायक निदेशक शामिल होने चाहिए, जिनके पास इस अधिनियम के तहत कार्य करने के लिए अपेक्षित अनुभव और योग्यताएं हों।

केंद्रीय प्राधिकरण के कार्य और कर्तव्य

केंद्रीय प्राधिकरण के कार्य और जिम्मेदारियां अधिनियम की धारा 18 में निर्धारित की गई हैं जिनमें शामिल हैं;

1. एक वर्ग के रूप में उपभोक्ताओं के अधिकारों की रक्षा और संवर्धन करना तथा उपभोक्ता अधिकारों के उल्लंघन को रोकना,
2. अनुचित व्यापार प्रथाओं को रोकने के लिए,
3. यह सुनिश्चित करने के लिए कि किसी भी वस्तु या सेवा के संबंध में कोई गलत या भ्रामक विज्ञापन प्रचारित न किया जाए,
4. यह सुनिश्चित करने के लिए कि कोई भी व्यक्ति झूठे या भ्रामक विज्ञापनों में भाग न ले,
5. उपभोक्ता अधिकारों के उल्लंघन या अनुचित व्यापार प्रथाओं के मामलों में पूछताछ या जांच करना।
6. राष्ट्रीय, राज्य या जिला आयोग के समक्ष शिकायत दर्ज करें, जैसा भी मामला हो।
7. उपभोक्ता अधिकारों के आनंद में बाधा डालने वाले कारकों से संबंधित मामलों की समीक्षा करना।
8. उपभोक्ता अधिकारों से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय अनुबंधों और सर्वोत्तम अंतर्राष्ट्रीय प्रथाओं को अपनाने की सिफारिश करना
9. उपभोक्ता अधिकारों के संबंध में अनुसंधान एवं जागरूकता को बढ़ावा देना।
10. अनुचित व्यापार प्रथाओं को रोकने और उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा के लिए आवश्यक दिशानिर्देश निर्धारित करना।

इसके अलावा, केंद्रीय प्राधिकरण को केंद्र सरकार से कोई शिकायत या निर्देश मिलने के बाद या अपने स्वयं के प्रस्ताव से उन मामलों की जांच करने का अधिकार भी है, जहां उपभोक्ता अधिकारों का उल्लंघन हुआ है या अनुचित व्यापार व्यवहार किया गया है। और अगर केंद्रीय प्राधिकरण को लगता है कि उपभोक्ता अधिकारों का उल्लंघन हुआ है या अनुचित व्यापार व्यवहार किया गया है, तो वह निम्न कार्य कर सकता है:

- उन वस्तुओं या सेवाओं को वापस बुलाना जो उपभोक्ताओं के लिए खतरनाक और हानिकारक हैं,
- उपभोक्ताओं को वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों की प्रतिपूर्ति करना, और
- उन प्रथाओं को बंद करें जो उपभोक्ताओं के लिए पूर्वाग्रहपूर्ण और हानिकारक हैं।

अधिनियम की धारा 21 के तहत , केंद्रीय प्राधिकरण को झूठे और भ्रामक विज्ञापनों के लिए निर्देश जारी करने का अधिकार है, जिसकी सीमा दस लाख रुपये तक हो सकती है। अपराध के दंड का निर्धारण करते समय केंद्रीय प्राधिकरण को ऐसे कारकों को ध्यान में रखना चाहिए जैसे; अपराध से प्रभावित जनसंख्या, अपराध की आवृत्ति और ऐसे उत्पाद की बिक्री से सकल राजस्व। केंद्रीय प्राधिकरण इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए तलाशी और जब्ती का निर्देश भी दे सकता है और उस स्थिति में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के प्रावधान लागू होंगे।

उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग

राज्य सरकार उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत राज्य के प्रत्येक जिले में जिला उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग की स्थापना करेगी, जिसे जिला आयोग के रूप में जाना जाएगा। जिला आयोग में एक अध्यक्ष और केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित दो से अन्यून सदस्य शामिल होंगे।

अधिनियम की धारा 34 जिला आयोग को उन शिकायतों पर विचार करने का अधिकार देती है, जहां भुगतान की गई वस्तुओं या सेवाओं का मूल्य एक करोड़ रुपये से अधिक नहीं है। वस्तुओं और सेवाओं से संबंधित शिकायत उपभोक्ता, मान्यता प्राप्त उपभोक्ता संघ, केंद्र सरकार, केंद्रीय प्राधिकरण, राज्य सरकार आदि द्वारा जिला आयोग में दायर की जा सकती है।

धारा 36 में कहा गया है कि जिला आयोग के समक्ष सभी कार्यवाहियां आयोग के अध्यक्ष और कम से कम एक सदस्य द्वारा संचालित की जाएंगी।

मध्यस्थता

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के अध्याय 5 की धारा 74 में कहा गया है कि केंद्र सरकार द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर उपभोक्ता मध्यस्थता प्रकोष्ठ की स्थापना की जाएगी तथा प्रत्येक राज्य सरकार अपने राज्य के अधिकार क्षेत्र में उपभोक्ता मध्यस्थता प्रकोष्ठ की स्थापना करेगी। मध्यस्थता करने के लिए नामित मध्यस्थ इसे ऐसे समय के भीतर और ऐसे तरीके से संचालित करेगा जैसा कि विनियमों द्वारा निर्दिष्ट किया जा सकता है।

अधिनियम की धारा 75 मध्यस्थों के पैनल के बारे में बताती है। इसमें मध्यस्थों की योग्यता, सेवा की शर्तें, नियुक्ति की प्रक्रिया और पैनल में शामिल मध्यस्थों को देय शुल्क का उल्लेख है।

मध्यस्थ का यह कर्तव्य है कि वह कुछ तथ्यों का खुलासा करे, जैसे; उपभोक्ता विवाद के परिणामस्वरूप कोई व्यक्तिगत, वित्तीय या व्यावसायिक नुकसान, उनकी स्वतंत्रता या निष्पक्षता को जन्म देने वाली परिस्थितियां और उपभोक्ता अधिकारों के संरक्षण के लिए कोई अन्य आवश्यक जानकारी।

उत्पाद दायित्व

अधिनियम की धारा 83 के अंतर्गत , शिकायतकर्ता द्वारा किसी उत्पाद निर्माता, उत्पाद सेवा प्रदाता या उत्पाद विक्रेता के विरुद्ध उत्पाद दायित्व कार्रवाई की जा सकती है।

उत्पाद निर्माता का दायित्व

किसी उत्पाद निर्माता को निम्नलिखित परिस्थितियों में उत्पाद दायित्व कार्रवाई के लिए उत्तरदायी ठहराया जाएगा:

- उत्पाद में विनिर्माण दोष हैं।
- उत्पाद ख़राब है.
- विनिर्माण विनिर्देशों से विचलन है।
- यह उत्पाद स्पष्ट वारंटी के अनुरूप नहीं है।
- उत्पाद में उचित उपयोग के लिए पर्याप्त जानकारी नहीं दी गई है।

उत्पाद सेवा प्रदाता का दायित्व

किसी उत्पाद सेवा प्रदाता को निम्नलिखित परिस्थितियों में उत्पाद दायित्व कार्रवाई के लिए उत्तरदायी ठहराया जाएगा:

- सेवा प्रदाता द्वारा प्रदान की गई सेवा दोषपूर्ण या अपूर्ण होने पर वह स्वयं जिम्मेदार होगा।
- उनकी ओर से लापरवाही बरती गई।
- सेवा प्रदाता सेवाओं के लिए पर्याप्त निर्देश और चेतावनियाँ जारी करने में विफल रहा।
- सेवा प्रदाता स्पष्ट वारंटी या अनुबंध की शर्तों एवं नियमों का पालन करने में विफल रहा।

उत्पाद विक्रेता का दायित्व

किसी उत्पाद विक्रेता को निम्नलिखित परिस्थितियों में उत्पाद दायित्व कार्रवाई के लिए उत्तरदायी ठहराया जाएगा:

- उन्होंने उत्पाद में परिवर्तन या संशोधन किया जिसका परिणाम उपभोक्ता के लिए हानिकारक हुआ।
- वे ऐसे उत्पाद को इकट्ठा करने, निरीक्षण करने या रखरखाव करने में उचित सावधानी बरतने में विफल रहे
- उन्होंने उत्पाद पर पर्याप्त नियंत्रण किया जिसके परिणामस्वरूप उपभोक्ता को नुकसान हुआ।

उत्पाद दायित्व के अपवाद

अधिनियम की धारा 87 में उत्पाद दायित्व कार्रवाई के कुछ अपवाद बताए गए हैं , जैसे;

- उपभोक्ता द्वारा उत्पाद में परिवर्तन, संशोधन या दुरुपयोग किया गया हो,
- जब निर्माता ने उत्पाद के उपयोग के लिए पर्याप्त चेतावनियाँ और निर्देश दिए हों तो उपभोक्ता उत्पाद दायित्व कार्रवाई नहीं कर सकता है।
- किसी भी ऐसे खतरे के बारे में चेतावनी न देने के लिए उत्पाद दायित्व कार्रवाई के मामले में निर्माता उत्तरदायी नहीं होगा, जो आम जनता को ज्ञात है।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 के तहत अपराध और दंड

इस अधिनियम के अंतर्गत सूचीबद्ध अपराध और दंड निम्नानुसार हैं।

1. झूठे और भ्रामक विज्ञापनों के लिए सजा: अधिनियम की धारा 89 के तहत कोई भी निर्माता या सेवा प्रदाता जो झूठे या भ्रामक विज्ञापनों को बढ़ावा देता है, उसे दो साल तक की कैद और दस लाख रुपये तक के जुर्माने से दंडित किया जाएगा।
2. मिलावट युक्त उत्पादों के निर्माण, बिक्री, वितरण के लिए दंड: उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 की धारा 90 के तहत कोई भी व्यक्ति जो मिलावट युक्त उत्पादों को बेचता, निर्माण करता, वितरित करता है, उसे निम्नलिखित परिस्थितियों में दंडित किया जाएगा;

- यदि मिलावटी उत्पाद से उपभोक्ता को कोई नुकसान नहीं होता है तो कारावास की अवधि छह महीने तक बढ़ाई जाएगी और जुर्माना एक लाख रुपये तक हो सकता है।
- यदि मिलावटी पदार्थ युक्त उत्पाद के कारण गंभीर चोट न पहुंचे तो कारावास की अवधि एक वर्ष तक होगी तथा जुर्माना तीन लाख रुपये तक हो सकता है।
- यदि मिलावटी पदार्थ युक्त उत्पाद के कारण गंभीर चोट पहुंचती है तो कारावास की अवधि सात वर्ष तक होगी और जुर्माना पांच लाख रुपये तक हो सकता है।
- यदि उत्पाद के कारण उपभोक्ता की मृत्यु हो जाती है तो कारावास की अवधि सात वर्ष होगी जो आजीवन कारावास तक हो सकती है और जुर्माना दस लाख रुपये से कम नहीं होगा।

3. नकली उत्पादों के विनिर्माण, विक्रय और वितरण के लिए दंड: धारा 91 में कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति जो नकली उत्पादों का विक्रय, विनिर्माण या वितरण करता है, उसे ऐसे कृत्यों के लिए दंडित किया जाएगा।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 से उपभोक्ताओं को कैसे लाभ होगा?

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 एक महत्वपूर्ण कानून है, जो उपभोक्ताओं के लिए लाभकारी है। यह अधिनियम उपभोक्ताओं के अधिकारों और हितों के संबंध में सुरक्षा के दायरे को व्यापक बनाता है।

1. अनुचित अनुबंध: अधिनियम ने अधिनियम की धारा 2(46) के अंतर्गत 'अनुचित अनुबंध' की शुरुआत की , जिसमें ऐसे अनुबंध शामिल हैं जिनमें अनुबंध संबंधी दायित्वों के निष्पादन के लिए उपभोक्ता द्वारा अत्यधिक सुरक्षा जमा राशि देने की आवश्यकता होती है। हालांकि, अधिनियम में अनुचित अनुबंधों को शामिल करने से उपभोक्ता ऐसे मामलों में शिकायत दर्ज करने में सक्षम होगा और धोखाधड़ी करने वाले व्यवसायों पर भी लगाम लगेगी।
2. प्रादेशिक अधिकार क्षेत्र: यह अधिनियम उपभोक्ताओं को वहां शिकायत दर्ज करने का अधिकार देता है जहां शिकायतकर्ता निवास करता है या व्यक्तिगत रूप से लाभ के लिए काम करता है। इस प्रकार, जब उनके अधिकारों का उल्लंघन होता है तो उपभोक्ताओं को अपनी शिकायतों के निवारण की मांग करने में लाभ होगा।
3. झूठे और भ्रामक विज्ञापन: अधिनियम में 'झूठे और भ्रामक विज्ञापन' शब्द को परिभाषित किया गया है तथा ऐसे कृत्यों या चूक के लिए कठोर दंड का प्रावधान भी किया गया है।
4. उत्पाद दायित्व: इस अधिनियम द्वारा 'उत्पाद दायित्व' शब्द को परिभाषित किया गया है, जिसमें कहा गया है कि उत्पाद निर्माता, सेवा प्रदाता या विक्रेता का यह कर्तव्य है कि वह निर्मित दोषपूर्ण उत्पाद या उपभोक्ता को प्रदान की गई सेवा के कारण उपभोक्ता को हुई किसी भी हानि की भरपाई करे।
5. मध्यस्थता और वैकल्पिक विवाद समाधान: यह अधिनियम उपभोक्ता को उपभोक्ता विवादों के त्वरित और प्रभावी निपटान के लिए मध्यस्थता और वैकल्पिक विवाद समाधान तंत्र का विकल्प चुनने में सक्षम बनाता है।
6. शिकायतों की ई-फाइलिंग: अधिनियम में शिकायतों की ई-फाइलिंग और आयोग द्वारा वीडियो कॉन्फ्रेंस के माध्यम से सुनवाई की सुविधा भी प्रदान की गई है। इस प्रकार, उपभोक्ताओं को अपनी शिकायतें दर्ज कराने के लिए सुविधाजनक साधन उपलब्ध कराए गए हैं।

ऐतिहासिक मामले कानून

हॉर्लिक्स लिमिटेड बनाम ज़ाइडस वेलनेस प्रोडक्ट्स लिमिटेड (2020)

इस मामले में , दोनों पक्ष पोषण संबंधी पेय के निर्माता हैं, हालांकि, ज़ाइडस ने हॉर्लिक्स लिमिटेड के उत्पादों को महत्वहीन बताते हुए एक टेलीविज़न विज्ञापन का विज्ञापन किया। यह विज्ञापन अंग्रेजी, तमिल और बंगाली सहित विभिन्न भाषाओं में प्रसारित किया जा रहा था। इसलिए, दिल्ली उच्च न्यायालय ने भ्रामक विज्ञापनों, अपमान और टेलीविज़न पर विज्ञापनों के प्रकाशन को नियंत्रित करने वाले कानून पर विभिन्न निर्णयों पर भरोसा किया और माना कि विज्ञापन अपमानजनक है क्योंकि यह उत्पाद की गुणवत्ता के बारे में कोई ठोस सबूत नहीं देता है। इसके अलावा, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया दर्शकों के दिमाग पर एक छाप छोड़ता है, इसलिए इस प्रकार के विज्ञापन न केवल उपभोक्ताओं के लिए हानिकारक होंगे, बल्कि शिकायतकर्ता को भी अपूरणीय क्षति होगी।

इस मामले पर निर्णय देते समय दिल्ली उच्च न्यायालय ने पेप्सी कंपनी इंक बनाम हिंदुस्तान कोका कोला लिमिटेड, *2003* के प्रसिद्ध निर्णय का सहारा लिया, जिसमें दिल्ली उच्च न्यायालय ने कहा कि अपमान के मामले में कुछ महत्वपूर्ण कारक हैं जिन्हें ध्यान में रखा जाना चाहिए, जो हैं; विज्ञापन का तरीका, विज्ञापन का उद्देश्य और विज्ञापन की कहानी।

वीना खन्ना बनाम अंसल प्रॉपर्टीज एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड, एनसीडीआरसी (2007)

इस मामले में , शिकायतकर्ता ने प्रतिवादी से एक फ्लैट खरीदने की पेशकश की, जिसे प्रतिवादी ने एक पत्र के माध्यम से 1.6.1999 को वितरित करने के लिए सहमति व्यक्त की। हालाँकि, फ्लैट का निर्माण निर्दिष्ट तिथि के भीतर नहीं किया गया था और इसलिए इसे वितरित नहीं किया गया था। सेवाओं में इस तरह की कमी के लिए, शिकायतकर्ता ने 18% प्रति वर्ष की दर से ब्याज के साथ जमा की गई राशि की वापसी की मांग की, जिसे विपक्षी ने अस्वीकार कर दिया।

राष्ट्रीय आयोग ने पाया कि निर्माण और कब्जे की डिलीवरी में देरी के कारण उपभोक्ता के लिए बाजार मूल्य पर फ्लैट खरीदना काफी मुश्किल है। राष्ट्रीय आयोग ने कहा कि राज्य आयोग का यह कर्तव्य है कि वह बिल्डरों को निर्देश दे कि वे फ्लैट का निर्माण पूरा होते ही उसका कब्जा दे दें और शिकायतकर्ता को निर्माण में देरी के लिए उचित मुआवजा दिया जाना चाहिए। शिकायतकर्ता ने राज्य आयोग के समक्ष सिर्फ रिफंड राशि का दावा किया है, लेकिन मामला आयोग के समक्ष पांच साल से लंबित था और उस दौरान अचल संपत्ति की बाजार कीमतों में जबरदस्त वृद्धि हुई थी। राष्ट्रीय आयोग ने आगे कहा कि राज्य आयोग का यह कर्तव्य था कि वह प्रतिवादियों को निर्देश दे कि वे शिकायतकर्ता को निर्धारित समय के भीतर कब्जा देने में देरी के कारण उचित मुआवजे के साथ फ्लैट या समकक्ष आकार के किसी अन्य फ्लैट का कब्जा दे दें। या, शिकायतकर्ता को पर्याप्त मुआवजा दिया जाना चाहिए ताकि वे उसी इलाके में मौजूदा बाजार दर पर उसी आकार का एक नया फ्लैट खरीद सकें।

सैपिएंट कॉर्पोरेशन एम्प्लॉइज बनाम एचडीएफसी बैंक लिमिटेड एवं अन्य (2012)

इस मामले में , सैपिएंट कॉर्पोरेशन कर्मचारी भविष्य निधि ट्रस्ट द्वारा एचडीएफसी बैंक लिमिटेड के खिलाफ एक उपभोक्ता शिकायत दर्ज की गई थी। शिकायतकर्ता ने दावा किया कि ओपी-बैंक ने शिकायतकर्ता के खाते से पैसे निकालकर सेवाओं में कमी की है। इस मामले में अदालत ने माना कि ओपी-बैंक की ओर से सेवा में कोई कमी नहीं की गई और शिकायतकर्ता द्वारा दिए गए तर्क निराधार हैं। नियामक प्राधिकरण के निर्देशों के अनुरूप व्यवहार को लापरवाही या सेवा में कमी नहीं कहा जा सकता।

निष्कर्ष

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 एक संशोधित कानून है जो उपभोक्ताओं को अनुचित व्यापार प्रथाओं, झूठे या भ्रामक विज्ञापनों आदि से बचाने के लिए कई तरह के लाभ और अधिकार प्रदान करता है। यह अधिनियम उपभोक्ताओं को वैकल्पिक विवाद समाधान तंत्र और मध्यस्थता की तलाश करने में सक्षम बनाता है ताकि पक्ष उपभोक्ता विवादों के त्वरित और प्रभावी निपटान का विकल्प चुन सकें। अधिनियम में शिकायतों की ई-फाइलिंग और ई-उपभोक्ताओं का दायरा विधायिका की दूरगामी सोच को दर्शाता है। इसके अलावा, अधिनियम ने उत्पाद दायित्व, अनुचित अनुबंध आदि जैसे नए शब्द भी पेश किए, जिससे उपभोक्ता अधिकारों के संरक्षण का दायरा बढ़ा और उपभोक्ताओं को अधिनियम के तहत उनके अधिकारों का उल्लंघन होने पर शिकायत दर्ज करने में सक्षम बनाया गया।

इस प्रकार, इसमें प्रावधानों को शामिल करने से उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 की कमियां दूर हो गई हैं। इस अधिनियम का अधिनियमन सर्वोपरि था और इसने देश में उपभोक्ताओं के अधिकारों की रक्षा के दायरे को बदल दिया।

DEFINITION (CPA 2019)

1. Advertisement (Section 2(1))

Definition: Any audio or visual publicity, representation, endorsement, or pronouncement made via light, sound, print, electronic media, or internet, including notices, labels, wrappers, invoices, or similar documents.

Illustration: If a company promotes its product through misleading advertisements on television, claiming benefits that the product does not offer, it could be held liable under this section.

Relevant Case Law: In the case of **Consumer Education and Research Centre v. Union of India**, the court addressed misleading advertisements and held that false claims about product quality can mislead consumers, which violates consumer rights.

---

2. Appropriate Laboratory (Section 2(2))

Definition: A laboratory recognized by the Central or State Government or established by law, financed or aided by the government, for testing goods to determine defects.

Illustration: A consumer files a complaint about a defective electrical appliance. The court can direct the product to be tested by an appropriate laboratory to determine whether the product suffers from defects.

Relevant Case Law: **National Insurance Co. Ltd. v. Bhagwati Devi** - In this case, the court emphasized the role of accredited laboratories in determining defects in goods and services.

---

3. Branch Office (Section 2(3))

Definition: A location described as a branch by an establishment, or any office that carries out the same or similar activities as the head office.

Illustration: A consumer files a complaint against a mobile service provider in a city where the company only has a branch office. The branch office is equally responsible for addressing consumer complaints, as it performs the same activities as the head office.

---

4. Central Authority (Section 2(4))

Definition: The **Central Consumer Protection Authority (CCPA)** established under Section 10 of the Act, responsible for regulating matters related to consumer rights, unfair trade practices, and misleading advertisements.

Illustration: The Central Authority can investigate companies promoting products that pose health risks or run deceptive advertising campaigns.

Relevant Case Law: **Indian Oil Corporation v. Consumer Protection Council, Kerala** - The case focused on the role of authorities in ensuring consumer rights and preventing unfair practices.

---

5. Complainant (Section 2(5))

Definition: A complainant can be:

- A consumer.
- A voluntary consumer association.
- The Central or State Government.
- The Central Authority.
- Legal heir or legal representative of a deceased consumer.
- Parent or guardian of a minor consumer.

Illustration: If a child is injured due to a defective toy, the parent can file a complaint as the complainant on behalf of the child under this section.

Relevant Case Law: **Lucknow Development Authority v. M.K. Gupta** - This case emphasized the broad definition of a complainant, allowing consumers and associations to seek remedies for unfair trade practices.

---

6. Complaint (Section 2(6))

Definition: A written allegation made by a complainant seeking relief under the Act for:

- Unfair trade practices or restrictive trade practices.
- Defective goods.
- Deficient services.
- Overcharging beyond the agreed price or the legal price.
- Sale of hazardous goods or services.

Illustration: A consumer buys a washing machine that stops working after a month. The consumer can file a complaint for defective goods and seek replacement or refund.

Relevant Case Law: **Ghaziabad Development Authority v. Balbir Singh** - The court dealt with the issue of deficient services in a housing project, emphasizing the importance of addressing consumer grievances.

---

7. Consumer (Section 2(7))

Definition: A consumer is a person who:

- Buys goods for consideration (paid or promised), or avails of services, but not for resale or commercial purposes.
- Uses goods or services with the buyer's consent, even if not the direct purchaser.

Illustration: If a person buys a smartphone and gifts it to a family member, the family member is also considered a consumer and can file a complaint if the phone is defective.

Exceptions: Persons obtaining goods for commercial purposes are excluded. However, self-employed persons using goods for livelihood are still considered consumers.

Relevant Case Law: **Laxmi Engineering Works v. P.S.G. Industrial Institute** - The court distinguished between consumers and commercial buyers, stating that only personal and non-commercial buyers are protected under the Act.

---

8. Consumer Dispute (Section 2(8))

Definition: A dispute where the person against whom a complaint is made denies or disputes the allegations in the complaint.

Illustration: A consumer alleges that a car manufacturer sold a defective vehicle. The manufacturer denies the claim, leading to a consumer dispute.

---

9. Consumer Rights (Section 2(9))

Definition: Consumer rights include:

- Protection against hazardous goods.
- The right to information about goods and services.
- Access to a variety of goods at competitive prices.
- The right to be heard and seek redressal against unfair practices.
- Awareness about consumer rights.

Illustration: A consumer buys a product that fails to meet safety standards. They have the right to seek redressal and demand corrective action.

Relevant Case Law: **Karnataka Power Transmission Corporation v. Ashok Iron Works** - The court highlighted consumer rights, particularly the right to be protected from hazardous goods.

---

10. Defect (Section 2(10))

Definition: Any fault, imperfection, or shortcoming in the quality, quantity, potency, or standard of goods as required under the law or contract.

Illustration: A consumer buys a car with faulty brakes, which poses a safety risk. This constitutes a defect, and the consumer can seek compensation.

Relevant Case Law: **Bajaj Auto Ltd. v. TVS Motor Co.** - The court dealt with issues related to defective vehicles, emphasizing manufacturers' liability for defects in products.

---

11. Deficiency (Section 2(11))

Definition: Any fault, imperfection, or inadequacy in the performance of services as required by law or contract.

Illustration: A travel agency fails to provide promised accommodations during a vacation package. The consumer can file a complaint for deficiency of service.

Relevant Case Law: **Indian Medical Association v. V.P. Shantha** - This landmark case clarified the inclusion of medical services under the definition of deficiency of services

Aspect	Consumer Protection Council	Consumer Protection Authority
Purpose	Advisory body to promote and protect consumer rights.	Regulatory body to enforce consumer rights and address violations.
Establishment	Established at Central, State, and District levels.	Central Consumer Protection Authority (CCPA) established by the Central Government.
Function	Provides advice on promoting consumer awareness and protection.	Regulates violations of consumer rights, unfair trade practices, and misleading advertisements.
Role	Purely advisory, offers recommendations but lacks enforcement powers.	Investigative and enforcement powers, including the ability to issue orders and impose penalties.

Members	Consists of government officials and non-official members, including the Minister of Consumer Affairs.	Headed by a Chief Commissioner with other appointed Commissioners.
Meetings	Meets at least once a year or more frequently as required.	Operates continuously with dedicated offices for investigation and enforcement.
Powers	Can advise but cannot enforce decisions or orders.	Has authority to conduct investigations, recall hazardous goods, impose penalties, and direct corrective actions.
Jurisdiction	Limited to providing recommendations and awareness campaigns.	Nationwide jurisdiction to protect consumer rights and penalize violations.
Examples of Action	Conducts consumer awareness programs and gives policy advice.	Investigates companies for false advertising or unfair trade practices, imposes fines.
Reference Section	Sections 3 to 9 of the Consumer Protection Act, 2019.	Section 10 of the Consumer Protection Act, 2019.

DIFFERENCES BETWEEN CPC,CCPA,COMMISSION

Aspect	Consumer Protection Council (उपभोक्ता संरक्षण परिषद)	Consumer Protection Authority (CCPA) (उपभोक्ता संरक्षण प्राधिकरण)	Consumer Disputes Redressal Commission (उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग
Purpose (उद्देश्य)	Advisory body to promote and protect consumer rights. (उपभोक्ता अधिकारों को बढ़ावा देने और संरक्षण के लिए एक सलाहकार निकाय।)	Regulatory body to enforce consumer rights and prevent unfair practices. (उपभोक्ता अधिकारों को लागू करने और अनुचित व्यापार प्रथाओं को रोकने के लिए एक नियामक निकाय।)	Quasi-judicial body for resolving consumer disputes. (उपभोक्ता विवादों को सुलझाने के लिए एक अर्ध-न्यायिक निकाय।)
Establishment (स्थापना)	Established at Central, State, and District levels. (केंद्र, राज्य और जिला स्तर पर स्थापित।)	Central Consumer Protection Authority (CCPA) established by the Central Government. (केंद्र सरकार द्वारा स्थापित केंद्रीय उपभोक्ता संरक्षण प्राधिकरण (CCPA))	Established at District, State, and National levels. (जिला, राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित।)
Function (कार्य)	Provides advice and recommendations on consumer protection policies. (उपभोक्ता संरक्षण नीतियों पर सलाह और सिफारिशें प्रदान करता है।)	Investigates violations of consumer rights, unfair trade practices, and misleading advertisements. (उपभोक्ता अधिकारों के उल्लंघन, अनुचित व्यापार प्रथाओं और भ्रामक विज्ञापनों की जांच करता है।)	Adjudicates complaints related to consumer rights and resolves disputes. (उपभोक्ता अधिकारों से संबंधित शिकायतों का निपटारा करता है और विवादों को सुलझाता है।)

Role (भूमिका)	Purely advisory, lacks enforcement powers. (केवल सलाहकार, लागू करने की शक्तियों का अभाव।)	Investigative and enforcement powers, including issuing orders and imposing penalties. (जांच और लागू करने की शक्तियाँ, जिसमें आदेश जारी करना और दंड देना शामिल है।)	Decides complaints, issues compensation orders, and provides legal redress. (शिकायतों का निपटारा करता है, मुआवजे के आदेश जारी करता है और कानूनी उपचार प्रदान करता है।)
Powers (शक्तियाँ)	Can recommend policies but cannot enforce them. (नीतियों की सिफारिश कर सकता है लेकिन उन्हें लागू नहीं कर सकता।)	Can investigate, recall goods, cancel advertisements, and impose penalties. (जांच कर सकता है, माल को वापस बुला सकता है, विज्ञापन रद्द कर सकता है और दंड दे सकता है।)	Has the power to summon parties, examine evidence, and pass binding judgments. (पार्टियों को बुलाने, साक्ष्य की जांच करने और बाध्यकारी निर्णय पारित करने की शक्ति है।)
Members (सदस्य)	Composed of government officials and non-official members, including the Minister of Consumer Affairs. (सरकारी अधिकारियों और गैर-आधिकारिक सदस्यों से मिलकर बना है, जिसमें उपभोक्ता मामलों के मंत्री भी शामिल हैं।)	Headed by a Chief Commissioner and other appointed Commissioners. (मुख्य आयुक्त और अन्य नियुक्त आयुक्तों द्वारा संचालित।)	Each commission has a President (judge) and members with legal experience. (प्रत्येक आयोग में एक अध्यक्ष (न्यायाधीश) और कानूनी अनुभव वाले सदस्य होते हैं।)

Meetings (बैठकें)	Meets at least once a year or as needed. (कम से कम वर्ष में एक बार या आवश्यकता के अनुसार बैठकें होती हैं।)	Operates continuously with dedicated offices for investigations and enforcement. (जांच और प्रवर्तन के लिए समर्पित कार्यालयों के साथ निरंतर संचालन करता है।)	Hears cases on a continuous basis with regular sittings for dispute resolution. (विवाद समाधान के लिए नियमित बैठकों के साथ निरंतर आधार पर मामलों की सुनवाई करता है।)
Jurisdiction (अधिकार क्षेत्र)	Nationwide advisory role, focused on policy and awareness. (देशव्यापी सलाहकार भूमिका, नीतियों और जागरूकता पर ध्यान केंद्रित।)	Nationwide jurisdiction for consumer rights protection and enforcement actions. (उपभोक्ता अधिकारों के संरक्षण और प्रवर्तन कार्रवाइयों के लिए देशव्यापी अधिकार क्षेत्र।)	Jurisdiction depends on the level (District: up to ₹1 crore, State: ₹1 crore to ₹10 crore, National: Above ₹10 crore). (अधिकार क्षेत्र स्तर पर निर्भर करता है (जिला: ₹1 करोड़ तक, राज्य: ₹1 करोड़ से ₹10 करोड़, राष्ट्रीय: ₹10 करोड़ से अधिक)।)
Enforcement Powers (प्रवर्तन शक्तियाँ)	No enforcement powers; can only provide recommendations. (कोई प्रवर्तन शक्तियाँ नहीं; केवल सिफारिशें प्रदान कर सकता है।)	Has enforcement powers to impose fines, recall hazardous goods, and stop unfair trade practices. (दंड लगाने, खतरनाक वस्तुओं को वापस बुलाने और अनुचित व्यापार प्रथाओं को रोकने की प्रवर्तन शक्तियाँ हैं।)	Can pass binding judgments, award compensation, and enforce legal orders. (बाध्यकारी निर्णय पारित कर सकता है, मुआवजा दे सकता है और कानूनी आदेश लागू कर सकता है।)

Authority Over (अधिकार क्षेत्र)	Limited to providing advice and conducting awareness programs. (सलाह देने और जागरूकता कार्यक्रम आयोजित करने तक सीमित।)	Regulates consumer rights violations and addresses unfair trade practices. (उपभोक्ता अधिकारों के उल्लंघन को नियंत्रित करता है और अनुचित व्यापार प्रथाओं को संबोधित करता है।)	Resolves disputes over defective goods, deficient services, overpricing, etc. (त्रुटिपूर्ण वस्तुओं, सेवा की कमी, अधिक कीमत आदि पर विवादों को सुलझाता है।)
Examples of Action (कार्रवाई के उदाहरण)	Recommends improvements in consumer protection policies and conducts awareness campaigns. (उपभोक्ता संरक्षण नीतियों में सुधार की सिफारिश करता है और जागरूकता अभियान चलाता है।)	Investigates false advertisements, imposes penalties on companies for unfair trade practices. (झूठे विज्ञापनों की जांच करता है, अनुचित व्यापार प्रथाओं के लिए कंपनियों पर दंड लगाता है।)	Resolves disputes over defective goods, deficient services, and other consumer complaints. (त्रुटिपूर्ण वस्तुओं, सेवा की कमी और अन्य उपभोक्ता शिकायतों पर विवादों को सुलझाता है।)
Appeal Process (अपील प्रक्रिया)	No legal decisions; hence, no appeals. (कोई कानूनी निर्णय नहीं; इसलिए, कोई अपील नहीं।)	Decisions can be appealed in the National Consumer Disputes Redressal Commission. (निर्णयों के खिलाफ राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद निवारण आयोग में अपील की जा सकती है।)	Appeals can be filed at the State or National Commission, depending on the level of the decision. (निर्णय के स्तर के आधार पर राज्य या राष्ट्रीय आयोग में अपील की जा सकती है।)

Related Sections in the Act (अधिनियम में संबंधित अनुभाग)	Sections 3 to 9 of the Consumer Protection Act, 2019. (उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 की धारा 3 से 9।)	Sections 10 to 27 of the Consumer Protection Act, 2019. (उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 की धारा 10 से 27।)	Sections 28 to 73 of the Consumer Protection Act, 2019. (उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 2019 की धारा 28 से 73।)

Here are **15 important case laws** based on the **Consumer Protection Act, 2019**:

1. Renu Singh v. SBI Life Insurance Co. Ltd. (2020)

Issue: Insurance Claim Denied

Renu Singh had opted for a policy in SBI Life Insurance. When the insured had died, the insurer refused to pay the insurance proceeds on technical grounds. The family members of the deceased filed an objection stating that all payments and liabilities related to the period of the policy had already been paid and discharged completely.

The court held that the rejection of a claim by an insurer without valid grounds constitutes a deficiency of service under the Consumer Protection Act, 2019. In this case, the absence of substantial grounds for rejecting the claim would have constituted unfair treatment on the part

of the insurance company. In cases where they settle an insurance claim arbitrarily, the case has further enhanced consumer rights against insurance companies.

2. Dr. Kamlesh Bajaj v. HDFC ERGO General Insurance Co. Ltd. (2021)

Issue: Delayed settlement of insurance claims.

Facts: Dr. Kamlesh Bajaj had taken a comprehensive health policy issued by HDFC ERGO. When he lodged the claim for his hospitalization expenses, it was delayed by more than six months which caused considerable inconvenience. All the necessary documents were submitted and were in order within time but still, the issue remains pending.

The courts have held that unreasonably delayed settlements of claims by an insurer amount to deficiency in service under Section 2(11) of the Consumer Protection Act, 2019. Damages for mental agony because of delay was decreed. Repeatedly, it has held that it is upon the insurer to settle claims within a short time span.

3. Ramesh Kumar v. Flipkart Internet Pvt. Ltd. (2021)

The issue involved was regarding a defective product supplied by an e-commerce platform.

Facts: Ramesh Kumar bought an electronic gadget from Flipkart. After receiving the article, they found that it was defective. However, they do not accept replacement/refund of the amount despite multiple requests by the purchaser.

Principle: The court held Flipkart liable for sale of the defective product and also for deficiency in service. It was ascertained that e-commerce portals should ensure the product sold on their platforms is of quality. Consumer Protection Act, 2019: The rights of a consumer must be redressed from the website if the goods are defective or the service offered is inadequate.

4. M/s Tata Motors Ltd. vs Meghraj Singh (2021)

Issue: Defect in the manufacturing of vehicles

Facts: P Mane, customer purchased a new car from Tata Motors and within several months of purchase, mechanical trouble started recurring in the cars. Despite several attempts at warranty repairs by the company, the problem did not go away.

Principle: It was ruled by the court that manufacturing defects in a motor vehicle fall within the definition of product liability given under the Consumer Protection Act, 2019. Tata Motors were held liable for not providing a defect-free product and for not rectifying within a reasonable period. The judgment again negated the defense wherein manufacturers claim they are not liable for providing fit-for-purpose products that also serve the purpose for which they are manufactured.

5. Pankaj Sharma v. Apple India Pvt. Ltd. (2021)

Issue: An issue of warranty and no service.

Facts: The Apple device of Pankaj Sharma malfunctioned within the warranty period. However, when he went to repair it, Apple rejected it saying it had been exposed to water. Sharma argued that that had never been the case when the issue first cropped up.

Applying this principle here, the court held that failure to render service in respect of repair under warranty falls within the definition of deficiency of service under the Consumer Protection Act, 2019. The judgment of the court supported the cause of consumers as regards warranties and made it impossible for companies to dismiss honor to commit during the warranty period.

6. Nikhil Jain v. Paytm Mall (2022)

Issue: Online fraud connected with e-commerce.

Facts: Nikhil Jain, through Paytm Mall, ordered an expensive gadget but a third party vendor listed on the platform scammed him and money was taken without delivery of the gadget.

Principle: The court has held under the Consumer Protection Act, 2019 that an e-commerce platform is liable for the fraudulent activities of third-party sellers. Paytm Mall was directed to refund the money and improve its monitoring of third-party sellers. This judgment reminds that the e-commerce platform has a responsibility towards consumers and must ensure consumers are safe and fraud not committed on their platforms.

7. Bajaj Allianz General Insurance Co. Ltd. v. Urvashi Seth (2020)

Issue: Wrong rejection of insurance claim.

Facts: Urvashi Seth's motor vehicle accident claim was rejected by Bajaj Allianz over an argument that negligence on the part of the driver led to the mishap. She claimed it was an unforeseen road hazard which led to the accident.

Principle: The court has accepted that denial of rightful claims without proper proof is a deficiency of service in the Consumer Protection Act, 2019. The case was decided in favor of Seth. The court stated that the grounds on which the claim was rejected by the insurer were not justified.

8. Sumitra Devi v. ICICI Lombard General Insurance Co. Ltd. (2021)

Issue: Rejection of health insurance claim.

Facts: Sumitra Devi lodged a health insurance claim after a surgery where ICICI Lombard rejected it on the grounds of pre-existing conditions which had not been disclosed at the time of taking the policy. She said that she had provided all the medical information requested.

Principle: the court opined that where an insurer is not providing a valid reason for denying health insurance claims it amounts to unfair trade practice and, in this case, directed the insurer to settle the claim which gave relief to the consumer.

9. Rupesh Kumar v. Hyundai Motor India Ltd. (2022)

Issue: Defective car and denial of repair.

Facts: Rupesh Kumar purchased a new car in which defects crept in after a few months. The same car, Hyundai denies repairs under the warranty period insisting that the defects were not covered under the warranty.

Principle: Court held selling of a defective product and refusing to provide repair within the warranty period as violation of the consumer rights under the Consumer Protection Act, 2019.

10. Indian Overseas Bank v. Vijay Kumar (2021)

Issue: Exorbitant bank charges.

Facts: Indian Overseas Bank was charging hefty amounts to Vijay Kumar without any notice or explanation. He complained about it, but the bank failed to give an acceptable explanation for the same.

Case law: The court held that arbitrary bank charges fall under deficiency of service as defined by the Consumer Protection Act, 2019 and demanded the bank to return the excess amount.

11. Rajesh Sharma v. MakeMyTrip (2021)

Issue: Poor service provision by an internet travel agency.

Facts: Rajesh Sharma had booked holiday with MakeMyTrip. However, many of the facilities promised by the agency during the holidays were not made available at the time of visit.

Principle: Liability under the heads of deficiency of services was held against the internet travel agency due to their failure to provide for the promises made. The judgement established

that internet travel agencies were liable under law for deficiency of service as provided in the Consumer Protection Act, 2019.

12. Union of India v. Kunal Yadav (2021)

Issue: Delay in Return of Refund for cancellation of railway ticket.

Facts: Kunal Yadav had booked a railway ticket, wherein the railway authorities canceled the railway ticket. Still, the refund was not returned to the respective account even after weeks.

Principle: Held that undue delays in the refund of money for canceled train tickets constitute unfair trade practices under the Consumer Protection Act, 2019 and directed the railway authorities to hasten the refund process.

13. Neha Singhal v. Zomato (2022)

Issue: Non-delivery of food ordered online.

Facts: Neha Singhal, via Zomato, placed an order of food that never arrived. Zomato refused to refund saying food was delivered.

Principle: The court ruled Zomato liable for the deficiency in service. Non-delivery of food and refusal to return the refund were the grounds for violations of consumer rights under the Consumer Protection Act, 2019.

Satish Sharma v. Bharat Gas Services (2022)

Question: Deficiency in gas cylinder delivery services.

Facts: Household gas cylinder of Satish Sharma was not reached within the promised date and time. Severe inconvenienced was caused .

Basic Principle: High Court held that when the delivery could not be made within the stipulated time, then it was a deficiency in service as per the Consumer Protection Act, 2019.

15. Anita Devi v. Amazon India (2021)

Problem: Selling counterfeit products through an e-commerce site.

Facts: Anita Devi had brought a branded product from Amazon India. Upon opening the pack, Anita discovered that it was a counterfeit. Anita complained against Amazon, but Amazon neither accepted nor rectified.

Principle: Amazon liability came due in the court for selling counterfeit products, as e-commerce portal is also responsible for the authenticity of goods that get sold through their portals under the Consumer Protection Act, 2019.

Here are 15 significant case laws related to the **Consumer Protection Act, 2019**, which provide insight into the evolution and application of consumer rights in India:

1. Joshi Technologies International Inc. v. Union of India (2015)

Issue: Meaning of "consumer" under the Act.

Facts: The case involved a company undertaking the business of oil exploration. It had contracted for some services but has dispute with regard to the service rendered. Consequently, it filed a complaint before the Consumer Fora invoking the protections of the Consumer Protection Act as a consumer.

Holding: The Supreme Court in this case has held that the term "consumer" under the Act do not comprise all such persons who engage themselves into commercial activity with profit motive. A person or organisation which indulges itself into commercial activity for earning profit can neither raise a claim to be a consumer unless the goods or services availed by it under the Act are for personal use only. It has given precedential value as it has excluded commercial undertakings from the ambit of consumer protection unless their consumption of goods /services is for some non-commercial purposes only.

2. National Insurance Co. Ltd. v. Hindustan Safety Glass Works Ltd. (2018)

Issue: Insurance claims and consumer rights.

Facts: Hindustan Safety Glass Works Ltd. had a policy with National Insurance. After sustaining loss the company attempted to file an insurance claim, which was arbitrarily delayed by the insurer.

Judgment: The Supreme Court held that failure to settle claims within reasonable time constitutes deficiency in service under the Consumer Protection Act. The court relied on the fact that the insurer's inability or unwillingness to settle claims within reasonable time meant, prima facie, a denial of fair and prompt service to the consumer. Thus, the insured was granted compensation.

3. Ravneet Singh Bagga v. KLM Royal Dutch Airlines (2000)

Case: Airline services and consumer disputes.

Fact: Ravneet Singh Bagga lodged a complaint against KLM Royal Dutch Airlines alleging service deficiency by delaying the flights along with mishandling the luggage.

Judgment: The court decided that airlines are liable for the failure to provide proper services such as delayed flights or mishandling of the luggage of a passenger. The airline was liable under the Consumer Protection Act due to its failure to offer such services. The court ordered compensation to Bagga for his mental and monetary distress caused, which created a very solid precedent in service deficiency cases dealt with airlines.

4. Lucknow Development Authority v. M.K. Gupta (1994)

Issue: Lousy services offered by government institutions.

Facts: M.K. Gupta had filed a complaint against Lucknow Development Authority for delayed handover of his dwelling house and poor service.

The Supreme Court held that under the Consumer Protection Act, authorities providing services can be held vicariously liable for deficiency in service. This brought under the broad sweep of the Act government and public service providers that were liable for inefficiency or delay in services like housing development, sanitary disposal collection services, etc.

5. Rubi (Chandra) Dutta v. United India Insurance Co. Ltd. (2011)

Problem: Un-timely settlement of insurance claims .

Facts: Rubi Dutta lodged a complaint about reasonable delays in settling her insurance claim which caused distress to her pocket.

Judgment: The Apex Court held that the delays in the settlement of insurance claims amount to deficiency in service. The court noted that the ability of the insurers to respect the timely processing of the claim and the amount paid to the consumer as compensation for undue delay is a triumph for consumers under the Act.

6. Cox & Kings (India) Ltd. v. Consumer Education and Research Society (1995)

Question: Travel agencies and consumer rights.

Facts: Consumer Education and Research Society filed a complaint against Cox & Kings, travel agency due to sub-standard travelling services provided to them including poor accommodation and travelling arrangements.

Held: National Consumer Disputes Redressal Commission held that travel agencies are vicariously liable for supplying services that fail in terms of the agreed standard. It was re-emphasized by the court that service providers have a responsibility, on their part, to ensure that the accommodation, transport, etc., match what was promised to consumers and thus its failure to do so amounts to deficiency in service.

7. Bajaj Auto Ltd. v. TVS Motor Company Ltd. (2009)

Issue: Deficiency in goods.

Facts: The case dealt with defects in goods supplied by Bajaj Auto Ltd., where it was held that a vehicle manufactured by them had inherent defects.

Judgment: The courts held that manufacturing defects in products offered to consumers, such as cars, fall within product liability. A consumer is justified to claim remuneration or replacement of the defective product by the manufacturer, which refuses to get it repaired or replaced under the Consumer Protection Act. This judgment established further the rights of a consumer for quality products.

8. Ghaziabad Development Authority v. Balbir Singh (2004)

Problem: Real estate and consumer protection.

Facts: Balbir Singh had booked a house with Ghaziabad Development Authority (GDA). There was considerable delay in delivery and deficiency in construction. He filed a complaint alleging deficiency in service.

Holding: This court observed that purchasing homebuyers fall under the fold of the Consumer Protection Act as consumers. It is their duty to deliver the properties, and delivery within the promised time frame. When not fulfilled, liability for deficiency in service is applicable. Compensation can be sought by the consumers.

9. Ambrish Kumar Shukla v. Ferrous Infrastructure Pvt. Ltd., 2017

Issue: Jurisdiction of consumer courts.

Facts Ambrish Kumar Shukla lodged a complaint with Ferrous Infrastructure for a property purchase case he claimed has been delayed. The dispute had arisen due to the determination of the jurisdiction of the court in which the case ought to be tried.

Holding: The NCDRC clarified that consumers can file complaints in consumer courts based on where they reside or work, and not necessarily where the company is located. This judgment opened greater access to justice for consumers by helping them obtain redressal more conveniently.

10. Karnataka Power Transmission Corp. v. Ashok Iron Works Pvt. Ltd. (2009)

Issue: Consumer vs. commercial entities.

Facts: Ashok Iron Works Pvt. Ltd. filed a complaint against Karnataka Power Transmission Corp., alleging that the company did not provide them with adequate power supply resulting in interference with business operations.

Holding: Held that even a commercial organization can be treated as a consumer if the goods or services availed themselves are not incidental to profit-making activities. The judgement settled when the predominant use of the service was non-commercial in nature, to which application consumer protection laws would apply to the businesses.

11. HDFC Bank Ltd. v. Balwinder Singh (2009)

Issue: The problem with recovery agents.

Facts: Recovery agents hired by HDFC Bank harassed Balwinder Singh for recovery of loan which was taken. Coercion and threat of recovery agents brought mental agony to Singh.

Decision: The court held that recovery agents employed by banks adopt harassing methods against consumers, which amount to deficiency in service under the Consumer Protection Act. Recovery banks are restrained from recovering in methods involving harassment and threats as their modes of recovery and have to comply with consumer law to fight against illegal debt recovery methods.

12. Cox & Kings Ltd. v. Joseph A. Fernandes (2008)

Issue: Deficiency in travel services.

Facts: The complainant, Joseph Fernandes, had booked a travel package for his clients through Cox & Kings. However, several promised services-including accommodations and sightseeing-could not be provided to the complainants.

Judgment: The NCDRC passed judgment in favor of the complainant, holding that travel companies have to provide the services promised in their itineraries. Failure to deliver on such promises results in compensation for deficiency in service under the Consumer Protection Act.

13. State of Karnataka v. Ameerbi (2007)

Issue: Inadequate health services.

Case: Ameerbi filed a complaint against medical negligence by health care providers following the death of one of her family members in a hospital due to improper treatment. The hospital stated that it incurred no liability and that it was not a trading organization.

Judgment: The High Court noted that hospitals and doctors owe a duty to those who are its recipient under the Consumer Protection Act. Medical negligence or failure to administer appropriate treatment is deficiency in service, and consumers are at liberty to recover damages against medical professionals and institutions for mistake and negligence on the part of the said medical services.

14. Maruti Udyog Ltd. v. Susheel Kumar Gabgotra (2006)

issue: Defective automobiles.

Facts: Susheel Kumar Gabgotra purchased a Maruti vehicle, which had some major defects within short distances of the purchase. Maruti Udyog refused to replace the vehicle or compensate the defects.

Holding: The Supreme Court ruled that defects in the automobile sold to consumers falls under Consumer Protection Act. The manufacturer is liable to replace the car, or provide adequate compensation for the product failing to adhere to quality parameters. This case dealt with consumer protection in the automobile business.

15. Spring Meadows Hospital v. Harjol Ahluwalia (1998)

Issue: Medical negligence.

Facts: The patient was a minor. The case involves a minor who was wrongfully treated at Spring Meadows Hospital and left suffering from serious medical complications. The claim is one of negligence.

Ruling: Supeme Court held that there would be liability of hospitals and doctors for medical negligence under the Consumer Protection Act. The court of law found the relationship of patient and hospital to be a service relationship and the deficiency in rendering due care constituted deficiency in service. The court ordered the hospital to recover from it the amount of compensation for the negligence.

भारत में मानहानि के विकास और वैधता का आलोचनात्मक विश्लेषण

The English version of the same article is separately provided in .pdf on 27th November 2024 in the subject whatsapp group.

अब हम ऐसे दौर में आ गए हैं, जहाँ मानहानि की वैधता भारत में चर्चा का एक बड़ा विषय है, क्योंकि हमने IPC, संविधान में इसे अपराध घोषित कर दिया है। लेकिन क्या हमने कभी सोचा है कि मानहानि कैसे विकसित हुई और भारत में इसे वैधानिकता कैसे मिली। इस लेख में हम कुछ केस कानूनों की मदद से इसका आलोचनात्मक विश्लेषण करने जा रहे हैं। लेकिन अंत में न्यायालय को इस संदर्भ में मामलों से निपटने में सावधानी बरतनी चाहिए। चूँकि मानहानि को भारतीय दंड संहिता और संविधान में अनुच्छेद 19(1)(a) के तहत न केवल संविधान के बाद बल्कि संविधान से पहले भी अपराधी घोषित किया गया है। जैसा कि हम अनुच्छेद 21 की व्यापक अर्थ में व्याख्या करते हैं, यह इसलिए भी है क्योंकि यह व्यक्तियों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता से संबंधित है।

कीवर्ड: मानहानि, संवैधानिक वैधता, अपराधीकरण, सिविल गलत, आपराधिक गलत।

परिचय

यह भारत में मानहानि के विकास और वैधता के आलोचनात्मक विश्लेषण पर एक लेख है। यह भारत में मानहानि कानून की वर्तमान स्थिति और इसे अपनी वैधता कैसे मिलती है, यह दिखाएगा। इस विश्लेषण में सर्वोच्च न्यायालय के कई निर्णय जैसे सुब्रमण्यम स्वामी बनाम भारत संघ और श्रेया सिंघल बनाम भारत संघ शामिल हैं। अंतिम बिंदु के रूप में, विश्लेषण यह निष्कर्ष निकालेगा कि जब भी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार पर प्रतिबंध लगाए जाते हैं, तो न्यायालय को सावधान रहना चाहिए। न्यायालय ने यह भी माना है कि प्रतिबंधों की तर्कसंगतता का न्याय करते समय, न्यायालय को आम रिपोर्ट के मामलों, समय के इतिहास और आम ज्ञान के मामलों और कानून के समय मौजूद परिस्थितियों को ध्यान में रखने का पूरा अधिकार है। आपराधिक मानहानि का प्रावधान उस भाषण को अपराध बनाता है जो किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाने के लिए बनाया गया है। व्यक्ति का निर्माण व्यापक रूप से किया गया था, इसलिए आलोचनात्मक प्रसारण या स्वतंत्र टिप्पणी के लिए इसके दुरुपयोग की संभावना अधिक थी क्योंकि इसे 1860 में भारतीय दंड संहिता में एकीकृत किया गया था। अंत में, अब इसकी संवैधानिक स्थिति पर सवाल उठाया गया है। हाल ही में, जिन मामलों में न्यायालय ने संवैधानिक न्यायशास्त्र में आगे की प्रगति और व्यक्तिगत स्वतंत्रता की व्यापक व्याख्या को ध्यान में रखे बिना आपराधिक मानहानि कानूनों को जीवित रहने देने के लिए संविधान सभा की सहमति पर भरोसा किया। हालाँकि, संविधान-पूर्व मानहानि कानून की मौजूदगी मात्र से इसे 'उचित' नहीं माना जा सकता। दूसरे, "अपमानित होने के अधिकार" को असाधारण रूप से उदार संरक्षण दिया गया, इस तथ्य पर विचार किए बिना कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ए) में अतिरिक्त संरक्षण दिया गया था, बड़े बेंचों द्वारा दिए गए उदाहरणों को ध्यान में नहीं रखा गया।

विकास और अर्थ

अब सवाल उठता है कि मानहानि का विकास कैसे होता है? शुरुआती समय या वर्तमान में किसी भी व्यक्ति की प्रतिष्ठा बहुत कीमती चीज है जिसे वह पूरे जीवन में कमाता है और अगर कोई इसे नुकसान पहुंचाता है, तो व्यक्ति को लगता है कि उसकी आत्मा मर गई है और उसने अपना सब कुछ खो दिया है। मानहानि एक सर्वव्यापी शब्द है जो किसी भी जानबूझकर लिखित या मौखिक गलत संचार को कवर करता है, जो व्यक्ति की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाता है: उस सम्मान, आदर या विश्वास को कम करता है जिसमें व्यक्ति को रखा जाता है; या इसमें किसी व्यक्ति, इकाई समूह, सरकार आदि के खिलाफ अपमानजनक, शत्रुतापूर्ण या असहमत राय या भावनाएँ शामिल हैं। मानहानि दो प्रकार की होती है मानहानि और बदनामी, जहाँ 'लिखित मानहानि' को मानहानि कहा जाता है और 'बोली या

मौखिक मानहानि' को मानहानि कहा जाता है। वे दोनों अंग्रेजी कॉमन लॉ से निकले हैं, लेकिन भारतीय न्यायशास्त्र में उन्हें एक दूसरे से अलग नहीं माना जाता है

बहुत पहले से ही, लोगों ने सार्वजनिक रूप से दिए गए मानहानि और हानिकारक बयानों को समझ लिया है। संभावना है कि मानहानि से जुड़ा पहला मामला न्यूयॉर्क बनाम सुलिवन था। इस मामले में सुलिवन वादी, एक पुलिस अधिकारी, ने मांग की कि उसके बारे में झूठे आरोप न्यूयॉर्क टाइम्स में छपें, और मानहानि के लिए अखबार पर मुकदमा दायर किया। अदालत ने राजनीतिक बहस के क्षेत्र में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में जनता के हित के विरुद्ध अपनी प्रतिष्ठा को बनाए रखने में वादी के हित को संतुलित किया। इसने माना कि मानहानि का दावा करने वाले एक सार्वजनिक अधिकारी को नुकसान की भरपाई के लिए वास्तविक दुर्भावना साबित करनी चाहिए। न्यायालय ने घोषित किया कि प्रथम संशोधन सार्वजनिक अधिकारियों पर खुली और सशक्त बहस की रक्षा करता है। एक सार्वजनिक अधिकारी या अन्य वादी जिसने स्वेच्छा से सार्वजनिक दृष्टि में कोई पद ग्रहण किया है, उसे यह साबित करना होगा कि मानहानिकारक कथन इस ज्ञान के साथ दिए गए थे कि वे झूठे थे या इस बात की परवाह किए बिना कि वे झूठे थे। जहां मानहानि की कार्रवाई में वादी एक निजी नागरिक है जो सार्वजनिक दृष्टि में नहीं है, वहां कानून मानहानिकारक कथनों को संवैधानिक संरक्षण की एक कम डिग्री प्रदान करता है। सार्वजनिक हस्तियां स्वेच्छा से खुद को ऐसी स्थिति में रखती हैं जो बारीकी से जांच को आमंत्रित करती है, जबकि निजी नागरिक जिन्होंने सार्वजनिक जीवन में प्रवेश नहीं किया है, वे अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करने में अपनी रुचि नहीं छोड़ते हैं। इसके अलावा, सार्वजनिक हस्तियों के पास उनके बारे में झूठे बयानों का सार्वजनिक रूप से प्रतिकार करने के साधनों तक अधिक पहुंच होती है। इन कारणों से, एक निजी नागरिक की प्रतिष्ठा और गोपनीयता के हित मुक्त भाषण विचारों से अधिक महत्वपूर्ण होते हैं और अदालतों से अधिक सुरक्षा के हकदार होते हैं।
गर्ट्ज़ बनाम रॉबर्ट वेल्च मामले में कहा गया है। मानहानि कानून के उद्देश्यों के लिए सार्वजनिक और निजी व्यक्तियों के बीच अंतर करना कभी-कभी मुश्किल होता है। किसी व्यक्ति को सभी स्थितियों में सार्वजनिक व्यक्ति माना जाने के लिए, व्यक्ति का नाम इतना परिचित होना चाहिए कि वह हर घर में प्रचलित हो।

भारत में मानहानि कानूनों की कल्पना लॉर्ड मैकाले ने 1837 में भारतीय दंड संहिता के पहले मसौदे में की थी और बाद में 1860 में इसे संहिताबद्ध किया गया था। मानहानि का अपराध प्रचलित अंग्रेजी कानून की ही तर्ज पर था। ब्रिटिश भारत में मानहानि के कृत्य को अपराध घोषित करने के पीछे का उद्देश्य निश्चित रूप से ब्रिटिश राज के हितों, राज्य की सुरक्षा और सार्वजनिक व्यवस्था की रक्षा से जुड़ा था। परिणामस्वरूप, भारतीय दंड संहिता 1860 की धारा 499 अधिनियमित की गई तथा पिछले 158 वर्षों से अपरिवर्तित बनी हुई है, तथा धारा में कहा गया है:

"जो कोई भी व्यक्ति, चाहे बोले गए शब्दों द्वारा या पढ़े जाने के लिए अभिप्रेत शब्दों द्वारा, या संकेतों द्वारा या दृश्य चित्रणों द्वारा, ऐसे व्यक्ति की प्रतिष्ठा को हानि पहुँचाने वाला कोई अभियोग लगाता है या प्रकाशित करता है, तो इसके पश्चात अपेक्षित मामलों को छोड़कर, उस व्यक्ति को बदनाम करने वाला कहा जाता है।

स्पष्टीकरण 1: किसी मृत व्यक्ति पर कोई भी अभियोग लगाना मानहानि के बराबर हो सकता है, यदि अभियोग उस व्यक्ति की प्रतिष्ठा को हानि पहुँचाता है, यदि वह जीवित है तथा उसके परिवार या अन्य निकट संबंधियों की भावनाओं को ठेस पहुँचाने का अभिप्राय रखता है।

स्पष्टीकरण 2: किसी कंपनी या संघ या व्यक्तियों के समूह के संबंध में अभियोग लगाना मानहानि के बराबर हो सकता है।

स्पष्टीकरण 3: वैकल्पिक रूप में या विडंबनापूर्ण रूप से व्यक्त किया गया अभियोग मानहानि के बराबर हो सकता है।

स्पष्टीकरण 4: किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाने वाला कोई भी आरोप तब तक नहीं माना जाता है, जब तक कि वह आरोप प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, दूसरों के अनुमान में, उस व्यक्ति के नैतिक या बौद्धिक चरित्र को कम न करे, या उसकी जाति या उसके व्यवसाय के संबंध में उसके चरित्र को कम न करे, या उस व्यक्ति की साख को कम न करे, या यह विश्वास न दिलाए कि उस व्यक्ति का शरीर घृणित अवस्था में है, या ऐसी अवस्था में है जिसे आम तौर पर अपमानजनक माना जाता है। धारा 500: मानहानि के लिए दंड- "जो कोई किसी अन्य व्यक्ति की मानहानि करता है, उसे दो वर्ष तक की अवधि के लिए साधारण कारावास या जुर्माना या दोनों से दंडित किया जाएगा।" जुलाई 1988 में, बोफोर्स मामले के आरोपों से आहत राजीव गांधी के प्रशासन ने एक मानहानि विधेयक पेश किया, जिसमें "आपराधिक आरोप" और "अपमानजनक लेखन" के नए अपराध बनाने की मांग की गई। विधेयक ने 'मानहानि' शब्द की परिभाषा को व्यापक बनाया और सबूत का बोझ पीड़ित से आरोपी पर स्थानांतरित कर दिया। लोकसभा ने विधेयक पारित कर दिया था और उसके बाद विधेयक को राज्यसभा में पेश किया जाना था। समाचार पत्र उद्योग द्वारा एक अत्यधिक सफल राष्ट्रव्यापी हड़ताल और तेजी से बढ़ते लोकप्रिय विरोध ने सरकार को विधेयक वापस लेने के लिए मजबूर कर दिया। विधेयक वापस लेने वाली प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया: 'स्वतंत्र प्रेस हमारे लोकतंत्र की आंतरिक शक्ति और गतिशीलता का एक अभिन्न अंग है। स्वतंत्र प्रेस के बिना कोई लोकतंत्र नहीं हो सकता। हमारे स्वतंत्रता संग्राम के अमर मूल्यों ने भारत में प्रेस को बनाया है। और ऊपर उल्लिखित धारा

मानहानि को आपराधिक बनाने के लिए बनाई गई थी। यह दीवानी और आपराधिक दोनों तरह का अपराध है। पिछले कुछ वर्षों में, भारत में मानहानि के मामले तेजी से बढ़ रहे हैं। व्यक्तिगत गलत और सार्वजनिक गलत के रूप में मानहानि

भारत में, मानहानि और बदनामी के बीच ऐसा कोई अंतर नहीं है। मानहानि और बदनामी दोनों ही आपराधिक अपराध हैं। बेहतर समझ के लिए इसे दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है:

व्यक्तिगत अपराध के रूप में मानहानि (आपराधिक): मानहानि को अपराध के रूप में भारतीय दंड संहिता अध्याय XXI की धारा 499 और 500 के तहत नियंत्रित किया जाता है, साथ ही राज्य के खिलाफ मानहानि को धारा 124A [राजद्रोह] के तहत नियंत्रित किया जाता है, जिसमें कहा गया है: "जो कोई भी, शब्दों द्वारा, चाहे बोले गए या लिखे गए, या संकेतों द्वारा, या दृश्य चित्रण द्वारा, या अन्यथा, घृणा या अवमानना लाने का प्रयास करता है, या भारत में कानून द्वारा स्थापित सरकार के प्रति असंतोष को उत्तेजित करता है या उत्तेजित करने का प्रयास करता है, उसे आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा, जिसमें जुर्माना जोड़ा जा सकता है, या तीन साल तक के कारावास से, जिसमें जुर्माना जोड़ा जा सकता है, या जुर्माना लगाया जा सकता है"।

धारा 124-ए की संवैधानिकता से निपटने वाला पहला मामला राम नंदन बनाम यूपी राज्य था। इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने माना कि आईपीसी की धारा 124-ए अधिकारहीन है क्योंकि यह संविधान के अनुच्छेद 19(1) (ए) का उल्लंघन करती है। 124-ए को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को प्रतिबंधित करने वाला और संविधान की जड़ों पर प्रहार करने वाला कहा गया था। हालाँकि, केदारनाथ दास बनाम बिहार राज्य के मामले में इसे खारिज कर दिया गया था। इस मामले में अदालत ने माना कि इस खंड को अव्यवस्था या कानून और व्यवस्था में गड़बड़ी या हिंसा भड़काने के इरादे या प्रवृत्ति से जुड़े कार्यों को सीमित करना चाहिए। हालाँकि, यदि इस धारा का मनमाने ढंग से उपयोग किया जाता है, तो यह अनुच्छेद 19 का उल्लंघन है। केदारनाथ सिंह बनाम बिहार राज्य के मामले में राम नंदन बनाम राज्य के फैसले को सुप्रीम कोर्ट ने पुनर्जीवित किया क्योंकि 'निर्णयों के तथ्य हैं: केदार नाथ सिंह बिहार में फॉरवर्ड कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य थे और सीआईडी के अफसरों को कुत्ता और आईएनजी को गुंडा कहने में शामिल थे। उन्होंने कहा कि उनका विश्वास क्रांति में है, जो आएगी और जिसकी लपटों में भारत के पूंजीपति, जमींदार और कांग्रेस नेता, जिन्होंने देश को लूटना अपना पेशा बना लिया है, राख हो जाएंगे और उनकी राख पर भारत के गरीबों और दबे-कुचले लोगों की सरकार स्थापित होगी। उन्होंने विनोबा भावे के भूमि पुनर्वितरण के प्रयासों पर भी निशाना साधा। इसके बाद, केदार नाथ सिंह को ट्रायल कोर्ट ने आईपीसी की धारा 124-ए और धारा 505 के तहत दोषी ठहराया और एक वर्ष की अवधि के लिए कठोर कारावास की सजा सुनाई। अपील पर, पटना के न्यायमूर्ति नकी इमाम की एकल पीठ ने

दोषसिद्धि को बरकरार रखा और तदनुसार अपील को खारिज कर दिया। यह क्रांति के लिए उकसावे से भरा था और यह भाषण समग्र रूप से निश्चित रूप से देशद्रोही था। यह सरकार की किसी विशेष नीति या उसके किसी उपाय की आलोचना करने वाला भाषण नहीं है।" आगे की अपील पर, मामले को उत्तर प्रदेश राज्य से उसी विषय पर अपील के एक समूह के साथ सर्वोच्च न्यायालय की एक डिवीजन बेंच के समक्ष रखा गया था। चूंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 124-ए और धारा 505 की संवैधानिक वैधता का मुद्दा था, इसलिए डिवीजन बेंच ने तदनुसार मामले को एक संविधान पीठ को भेज दिया। न्यायिक इतिहास का हवाला देकर विवादित प्रावधानों की जांच करने के बाद सर्वोच्च न्यायालय को निहारेंदु दत्त मजूमदार बनाम द किंग और किंग-सम्राट बनाम सदाशिव नारायण भालेराव में संघीय न्यायालय के दो परस्पर विरोधी निर्णयों का सामना करना पड़ा। इन दोनों निर्णयों पर विचार करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय की राय थी कि यदि संघीय न्यायालय के निर्णय और व्याख्या को स्वीकार कर लिया जाता है तो विवादित धाराएँ भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार पर अनुमेय विधायी प्रतिबंधों के दायरे में आ जाएँगी। दूसरी ओर, यदि प्रिवी काउंसिल के निर्णय और व्याख्या को स्वीकार कर लिया जाता है तो विवादित धाराएँ अनुच्छेद 19(1)(ए) के साथ अनुच्छेद 19(2) के मद्देनजर असंवैधानिक होने के कारण रद्द की जा सकती हैं। इस प्रकार, विवादित धाराओं का दायरा सीमित कर दिया गया और विवादित दोनों धाराओं की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखा गया। तदनुसार, अपील को खारिज कर दिया गया और अन्य संबंधित मामले की अपील को संबंधित उच्च न्यायालय में वापस भेज दिया गया।

संबंधित मुद्दे:

क्या भारतीय दंड संहिता की धाराएँ 124A और 505 संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ए) के साथ अनुच्छेद 19(2) के मद्देनजर अधिकारहीन हैं?

क्या अव्यवस्था फैलाने, कानून और व्यवस्था को बिगाड़ने या हिंसा को भड़काने की मंशा या प्रवृत्ति राजद्रोह का अपराध माना जाना चाहिए?

अनुपात:

मुद्दा 1- क्या संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ए) के साथ अनुच्छेद 19(2) के मद्देनजर भारतीय दंड संहिता की धारा 124ए और 505 अधिकारहीन हैं?

सुप्रीम कोर्ट ने माना कि यह राज्य की सुरक्षा है, जो कानून और व्यवस्था के रखरखाव पर निर्भर करती है और यह वह बुनियादी विचार है जिस पर राज्य के खिलाफ अपराधों को दंडित करने के उद्देश्य से कानून बनाया जाता है। ऐसा कानून, एक ओर, भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की पूरी तरह से रक्षा और गारंटी देता है, जो हमारे संविधान द्वारा स्थापित लोकतांत्रिक सरकार के लिए अनिवार्य है। इसने माना कि राज्य की सुरक्षा और अखंडता के लिए ऐसा प्रतिबंध आवश्यक है। तदनुसार, सर्वोच्च न्यायालय ने माना कि भारतीय दंड संहिता की धारा 124-ए और धारा 505 भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(1)(ए) को अनुच्छेद 19(2) के साथ पढ़ने पर विचार करते हुए भारत के संविधान के अंतर्गत आती है।

मुद्दा 2- क्या अव्यवस्था फैलाने या कानून और व्यवस्था को बिगाड़ने या हिंसा भड़काने की मंशा या प्रवृत्ति को राजद्रोह का अपराध माना जाना चाहिए?

संघीय न्यायालय और प्रिवी काउंसिल के परस्पर विरोधी निर्णयों पर विचार करते हुए सर्वोच्च न्यायालय की राय थी कि यदि प्रिवी काउंसिल की व्याख्या यह है कि अव्यवस्था फैलाने की प्रवृत्ति या कानून और व्यवस्था को बिगाड़ने की मंशा के बिना भी, लिखित या बोले गए शब्दों के उपयोग से जो सरकार के खिलाफ केवल असंतोष या दुश्मनी की भावना पैदा करते हैं, राजद्रोह का अपराध पूर्ण है, तो धाराओं की ऐसी व्याख्या उन्हें अनुच्छेद 19(1)(ए) के साथ खंड (2) के मद्देनजर असंवैधानिक बनाती है।

प्रत्येक नागरिक का यह मौलिक अधिकार है कि वह अपने स्वयं के राजनीतिक सिद्धांत और विचार रखे तथा उनका प्रचार-प्रसार करे और उनकी स्थापना के लिए कार्य करे। तब जहां समाज की प्रतिज्ञा केवल इस राजनीतिक विश्वास का प्रचार-प्रसार करने का उपक्रम मात्र थी कि पूंजीवाद और निजी स्वामित्व समाज की उन्नति के लिए खतरनाक हैं और पूंजीवाद और निजी स्वामित्व का अंत करने तथा एक समाजवादी राज्य की स्थापना करने के लिए कार्य करना जिसके लिए अन्य लोग पहले से ही श्रमिक वर्गों के नेतृत्व में कार्य कर रहे हैं, वहां यह माना गया कि समाज के सदस्यों के लिए सभी शांतिपूर्ण तरीकों से इन उद्देश्यों को प्राप्त करना खुला है। लगातार जनमत से लड़ना जो उनके विरुद्ध हो सकता है और उन लोगों का विरोध करना जो समाज की मौजूदा व्यवस्था और वर्तमान सरकार को जारी रखना चाहते हैं, यह मान लेना भी वैध होगा कि वे मौजूदा सरकार में बदलाव चाहते हैं ताकि वे अपने कार्यक्रम और नीति को पूरा कर सकें, उनकी प्रतिज्ञा में केवल "लड़ाई" और "युद्ध" शब्दों का उपयोग धारा 295 ए [जानबूझकर और दुर्भावनापूर्ण कार्य, जिसका उद्देश्य किसी वर्ग के धर्म या धार्मिक विश्वासों का अपमान करके उसकी धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाना है] के साथ-साथ यह भी कहा गया है: "जो कोई भी, जानबूझकर और दुर्भावनापूर्ण इरादे से भारत के किसी भी वर्ग के नागरिक की धार्मिक भावनाओं को शब्दों से, चाहे बोले गए या लिखे गए, या संकेतों या दृश्य चित्रणों द्वारा या

अन्यथा, अपमानित करता है या अपमान करने का प्रयास करता है, उसे तीन से चार साल तक की अवधि के लिए कारावास या दोनों से दंडित किया जाएगा।" अब इन अपराधों के लिए प्रक्रिया को दंड प्रक्रिया संहिता के तहत परिभाषित किया जा रहा है, जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि इस धारा के तहत अपराध गैर-संज्ञेय और जमानती हैं। जिन लोगों पर अपराध का आरोप लगाया जाता है, उन्हें आम तौर पर वारंट के बिना हिरासत में नहीं लिया जाएगा, और इस तरह, एक पीड़ित व्यक्ति आसानी से पुलिस शिकायत दर्ज नहीं कर पाएगा, बल्कि ज्यादातर मामलों में, उसे मजिस्ट्रेट के सामने शिकायत दर्ज करनी होगी। जहाँ तक 'सत्य बचाव' का सवाल है, हालाँकि 'सत्य' को आम तौर पर एक दीवानी अपराध के रूप में मानहानि के लिए बचाव माना जाता है, लेकिन आपराधिक कानून के तहत, केवल सत्य ही सीमित परिस्थितियों में ही अपराध के रूप में मानहानि के लिए बचाव है, यह व्यक्तियों को विशेष रूप से IPC के तहत मानहानि करने का दोषी ठहराए जाने के लिए कमज़ोर बना सकता है, भले ही उनके द्वारा लगाए गए आरोप सत्य हों।

सार्वजनिक अपराध के रूप में मानहानि (दीवानी/टोर्ट): जहाँ तक टोर्ट कानून के तहत मानहानि का सवाल है, एक सामान्य नियम के रूप में, ध्यान मानहानि पर होता है न कि बदनामी पर। यह स्थापित करने के लिए कि कोई कथन मानहानिपूर्ण है, यह साबित होना चाहिए कि यह झूठा, लिखित, मानहानिकारक और सार्वजनिक रूप से प्रकाशित है। टोर्ट के रूप में मानहानि का एक दिलचस्प पहलू यह है कि यह केवल तभी गलत है जब मानहानि ऐसी प्रकृति की हो जो किसी जीवित व्यक्ति की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुँचाती हो। अधिकांश मामलों में, इसका अर्थ यह है कि किसी मृत व्यक्ति को बदनाम करना कोई अपकृत्य नहीं है, क्योंकि सामान्य नियम के अनुसार, वादी को यह साबित करने में सक्षम होना चाहिए कि उसके लिए अपमानजनक शब्द संदर्भित किए गए थे। हालांकि, इसका मतलब यह नहीं है कि अगर किसी मृत व्यक्ति को बदनाम किया जाता है, तो कार्रवाई का कोई कारण नहीं हो सकता है। इसके अलावा, अगर मानहानि के लिए कार्रवाई की जाती है, और मानहानि की गई पाई जाती है, तो वादी को हर्जाना देय होगा। इसके अलावा, किसी प्रकाशन में बदनामी होने की आशंका वाले व्यक्ति को ऐसे प्रकाशन को रोकने के लिए निषेधाज्ञा की मांग शायद ही कभी की जाती है। हालांकि, प्रकाशन-पूर्व निषेधाज्ञा शायद ही कभी दी जाती है क्योंकि भारतीय न्यायालयों ने वर्ष 1891 में प्रसिद्ध मामले बोनार्ड बनाम पेरीमैन में निर्धारित सिद्धांत का पालन किया है:

"न्यायालय के पास निषेधाज्ञा द्वारा और यहां तक कि एक अंतरिम निषेधाज्ञा द्वारा मानहानि के प्रकाशन को रोकने का अधिकार है। लेकिन अधिकार क्षेत्र का प्रयोग विवेकाधीन है, और स्पष्ट मामलों को छोड़कर अंतरिम निषेधाज्ञा नहीं दी जानी चाहिए- ऐसे मामलों में, जिनमें अगर जूरी को शिकायत की गई बात मानहानि वाली नहीं लगती, तो अदालत फैसले को अनुचित मानकर रद्द कर देगी। अंतरिम निषेधाज्ञा तब नहीं दी जानी चाहिए जब प्रतिवादी शपथ लेता है कि वह मानहानि को उचित

ठहराने में सक्षम होगा, और अदालत इस बात से संतुष्ट नहीं है कि वह ऐसा करने में सक्षम नहीं हो सकता है। इस सिद्धांत का पालन दिल्ली उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने वर्ष 2002 के खुशवंत सिंह बनाम मेनका गांधी मामले में किया है। इस प्रकार, भले ही यह आशंका हो कि सामग्री मानहानि करने वाली प्रकृति की हो सकती है, यह संभावना है कि प्रकाशन को अपवादस्वरूप मामलों को छोड़कर प्रतिबंधित नहीं किया जाएगा- संभवतः, ऐसे मामले जहां बाद में हर्जाने का भुगतान स्पष्ट रूप से बदनाम व्यक्ति के साथ किए गए गलत काम को ठीक करने के लिए पर्याप्त नहीं होगा। गैर-अपवादात्मक परिस्थितियों में, भारतीय न्यायालयों ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का समर्थन करने की प्रवृत्ति दिखाई है, तथा निषेधाज्ञा देने की प्रवृत्ति नहीं दिखाई है, जिससे संभावित मानहानि के आधार पर अभिव्यक्ति पर रोक लग सकती हो।

मानहानि का अर्थ है मानहानि करने या मानहानि होने का कार्य या परिणाम। इसलिए, यह तर्क देना कि यह शब्द सिविल और आपराधिक मानहानि दोनों को समाहित करता है, वैचारिक रूप से गलत है। इसलिए, यह प्रस्तावित है कि संसद अनुच्छेद 19(2) के तहत मानहानि की समस्या को दूर करने के लिए एक कानून बना सकती है। इस तरह बनाया गया कानून सिविल या आपराधिक कानून हो सकता है। कानून मानहानि से संबंधित होना चाहिए, लेकिन कानून की प्रकृति जिसमें उसका सिविल/आपराधिक चरित्र शामिल है, तर्कसंगतता की आवश्यकता के तहत विचार के लिए आना चाहिए। अब सिर्फ इसलिए कि जब अनुच्छेद 19(2) अधिनियमित किया गया था और जब इसे बाद में संशोधित किया गया था, तब एक पूर्व-मौजूदा क़ानून था, इसका मतलब यह नहीं है कि अनुच्छेद 19(1)(ए) में इसकी तर्कसंगतता के बारे में आगे की जांच की आवश्यकता के बिना अनुच्छेद 19(2) द्वारा पहले से मौजूद कानून को बचा लिया गया है। इस तरह अनुच्छेद 19 में उचित प्रतिबंध जोड़े जा रहे हैं।

अब जब मानहानि को आपराधिक बना दिया गया है, तो यह आरोप लगाया गया है कि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 19(1) के तहत गारंटीकृत स्वतंत्रता और अभिव्यक्ति के मौलिक अधिकार को छीन लेता है। क्योंकि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार को स्वस्थ लोकतंत्र के सबसे बुनियादी तत्वों में से एक माना जाता है क्योंकि यह अपने नागरिकों को देश की सामाजिक और राजनीतिक प्रक्रिया में पूरी तरह और प्रभावी रूप से भाग लेने की अनुमति देता है। अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता किसी के विश्वास को व्यक्त करने और राजनीतिक दृष्टिकोण दिखाने का अवसर प्रदान करती है। लेकिन सवाल यह उठता है कि क्या मानहानि संविधान के अनुच्छेद 19(2) के तहत राज्य द्वारा लगाए गए उचित प्रतिबंधों के अंतर्गत आती है या नहीं? अब निम्नलिखित मामलों का आलोचनात्मक विश्लेषण है जो दर्शाता है कि हाँ मानहानि अनुच्छेद 19(2) के तहत लगाए गए उचित प्रतिबंधों के अंतर्गत आती है।

आर. राज गोपालन बनाम तमिलनाडु राज्य: यह मामला सिविल मानहानि की संवैधानिकता से संबंधित है। इस मामले में, भारत के सुप्रीम कोर्ट ने न्यूयॉर्क टाइम्स बनाम सुलिवन में अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट के एक ऐतिहासिक फैसले का उल्लेख किया, जिसमें कहा गया था कि सरकारी अधिकारी जो अपने कर्तव्य पर है, वह केवल तभी हर्जाना वसूल सकता है जब सत्य का दावा झूठा हो और सत्य के प्रति लापरवाह हो। इस मामले के माध्यम से, न्यायाधीशों ने मुक्त भाषण और सिविल मानहानि के बीच संबंधों की जांच की। न्यायालय ने माना कि सामान्य कानून मानहानि अनुच्छेद 19(1)(ए) के तहत अनुचित रूप से प्रतिबंधित है क्योंकि यह बिना किसी गलती के दायित्व का अनुचित लाभ उठाता है। धारा 499 के खिलाफ प्राथमिक हमला यह था कि मूल रूप से एक निजी गलती को आपराधिक बना दिया गया। इस धारा ने मुक्त चर्चा पर सीमाएँ बढ़ा दीं।

सुब्रमण्यम स्वामी बनाम भारत संघ: न्यायमूर्ति दीपक मिश्रा और न्यायमूर्ति पी.सी. पंत की सुप्रीम कोर्ट की दो न्यायाधीशों की पीठ ने देश के आपराधिक मानहानि कानूनों की संवैधानिक वैधता को बनाए रखने का फैसला किया, यह निर्णय लेते हुए कि कानून अभिव्यक्ति के अधिकार से असहमत नहीं हैं। तय किए गए फैसले ने अधिकांश प्रकाशन और मीडिया के आंकड़ों को नकारात्मक पक्ष में रखा। कुछ लोगों ने यह भी तर्क दिया कि यह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को रोक सकता है। इस मामले को इसके शैक्षिक मूल्यों की तुलना में इसकी अस्पष्ट रंगीन भाषाओं के लिए अधिक याद किया जाएगा। घोषणा से यह स्पष्ट है कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर एक खतरनाक प्रभाव पड़ा है। उन्होंने अपने विश्लेषण के माध्यम से बताया कि जनता की प्रतिष्ठा को हुए नुकसान की आवश्यकता है और वे निजी गलतियों के लिए सार्वजनिक उपचार प्रदान करना चाहते हैं। उन्होंने अपने विश्लेषण के माध्यम से बताया कि जनता को अपनी प्रतिष्ठा को हुए नुकसान की भरपाई करनी होगी और वे यह सोचने के लिए अच्छे आधार प्रदान करना चाहते थे कि यह निर्णय अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर एक क्रूर प्रहार है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 19(2) में मानहानि के हित में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर उचित प्रतिबंध बताए गए हैं। लेकिन अनुच्छेद में मानहानि के बारे में यह नहीं बताया गया है कि यह आपराधिक और नागरिक मानहानि दोनों से संबंधित है या नहीं। उचित शब्द में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के उल्लंघन की डिग्री और दांव पर लगे जनता के हित के बीच संबंध के संदर्भ में आनुपातिकता पहलू शामिल है। सभी के लिए एक ही गाना गाना जरूरी नहीं है। किसी भी आपराधिक मानहानि मामले की शुरुआत के लिए याचिका पर समन जारी करने में मजिस्ट्रेट को बेहद सावधान रहना चाहिए। यह ध्यान देने योग्य है कि दंड प्रावधानों को सही ठहराने के लिए केंद्र ने भारतीय समाज के काम करने के अराजक तरीके के बारे में कहा और इस बारे में राय दी कि कैसे आपराधिक मानहानि लोगों को बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अभ्यास करने से रोकती है। यह तार्किक रूप से निष्कर्ष निकाला गया है कि ज्यादातर राजनेता अपने विरोधियों के खिलाफ आपराधिक मानहानि के

मामले का सामना कर रहे हैं। सुब्रमण्यम स्वामी बनाम यूओआई 2016। सुप्रीम कोर्ट ने माना कि आपराधिक मानहानि से निपटने वाले आईओसी की धारा 499 और धारा 500 संवैधानिक रूप से वैध हैं।

इसने संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत नागरिकों को दिए गए जीवन के अधिकार के एक हिस्से के रूप में प्रतिष्ठा के अधिकार को मान्यता दी। इसने घोषित किया कि अनुच्छेद 19(1)(ए) के तहत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार को अनुच्छेद 21 के तहत प्रतिष्ठा के अधिकार के साथ संतुलित किया जाना चाहिए।
सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि स्वतंत्र प्रेस राजनीतिक संबंधों का हृदय और आत्मा है और यह एक सार्वजनिक शिक्षक है, लेकिन यह स्वतंत्रता निरपेक्ष नहीं है और मीडिया द्वारा इसका उपयोग किसी व्यक्ति की बहुमूल्य प्रतिष्ठा को नुकसान पहुंचाने के लिए नहीं किया जा सकता है।

कोर्ट ने कहा कि प्रेस को उचित प्रतिबंधों का भी पालन करना होगा और इसका उद्देश्य तथ्यों और विचारों को प्रकाशित करके जनहित को आगे बढ़ाना है, जिसके बिना लोकतांत्रिक मतदाता जिम्मेदार निर्णय नहीं ले सकते।

कोर्ट ने कहा कि किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा भी उतना ही महत्वपूर्ण अधिकार है और यह अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के समान ही है।

कोर्ट ने कहा कि व्यक्तिगत गरिमा, जीवन और प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए मानहानि को अपराध बनाना अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार पर एक उचित प्रतिबंध है।

प्रतिष्ठा का अधिकार संविधान के अनुच्छेद 21 का एक घटक है।

यह एक व्यक्ति का मौलिक अधिकार है।

यह एक मानवाधिकार भी है। कुल मिलाकर, यह सामाजिक हित में है।

मानहानि के प्रावधानों को बनाए रखने से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर रोक नहीं लगती।

न्यायालय ने कहा कि किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा को जानबूझकर ठेस पहुंचाना मात्र निजी गलती नहीं है, बल्कि इसके लिए क्षतिपूर्ति के लिए केवल दीवानी मुकदमा दायर किया जा सकता है।

मानहानि समाज के विरुद्ध किया गया अपराध है और राज्य का यह कर्तव्य है कि वह अपने नागरिकों की गरिमा को पहुंचाई गई ठेस का निवारण करे।

किसी को भी दूसरों के व्यक्तित्व या प्रतिष्ठा के अधिकार को ठेस पहुंचाने का अधिकार नहीं है। अभिव्यक्ति के कृत्यों में शामिल लोगों के हितों को न केवल वक्ता के दृष्टिकोण से देखा जाना चाहिए, बल्कि जिस स्थान पर वह बोल रहा है, परिदृश्य, श्रोता, प्रकाशन की प्रतिक्रिया, भाषण का उद्देश्य और वह मंच जिसमें नागरिक अपनी अभिव्यक्ति और भाषण की स्वतंत्रता का प्रयोग करता है, इन सभी को ध्यान में रखना चाहिए।

आपराधिक मानहानि की संवैधानिक वैधता के बारे में, सर्वोच्च न्यायालय ने सीआरपीसी की धारा 199(2) से (4) को निरस्त करने की मांग को भी खारिज कर दिया।

न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि यह धारा एक अलग वर्ग बनाती है। इसने इस तर्क को भी खारिज कर दिया कि इस प्रावधान में उल्लिखित वर्गीकरण का कोई औचित्य नहीं है और यह संवैधानिक जांच के दायरे में नहीं आता है।

सीआरपीसी में प्रावधान सरकारी कर्मचारियों को उनके आधिकारिक कार्यों पर कथित अपमानजनक टिप्पणियों के लिए सरकारी अभियोजक के माध्यम से सत्र न्यायालय में शिकायत दर्ज करने की अनुमति देता है।

न्यायालय ने कहा कि सीआरपीसी 199(2) से (4) के तहत मानहानि की शिकायत दर्ज करने का सरकारी कर्मचारी का अधिकार धारा 199(6) के तहत मजिस्ट्रेट के समक्ष व्यक्तिगत रूप से शिकायत दर्ज करने के उसके अधिकार से अलग है।

धारा 199(6) सरकारी कर्मचारी को वह सब कुछ देती है जो हर नागरिक को प्राप्त है क्योंकि उसे नागरिक के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है। ऐसे मामले हो सकते हैं जहां सरकारी कर्मचारी के पक्ष में उसके अधिकार की रक्षा के लिए राज्य सरकार द्वारा मंजूरी नहीं दी जा सकती है और ऐसी स्थिति में वह धारा 199(2) से (4) के तहत मजिस्ट्रेट के समक्ष मामला दर्ज कर सकता है।

न्यायालय का तर्क हमेशा आसानी से समझ में नहीं आता: सार्वजनिक और निजी गलतियों के बीच उसका अंतर स्पष्ट नहीं है, वह धर्मग्रंथों और साहित्य के कार्यों का उल्लेख करता है लेकिन यह स्पष्ट

संकेत नहीं देता कि वह ऐसा क्यों करता है, और वह मौलिक कर्तव्य और संवैधानिक सुविधा जैसी चीजों की बात करता है।

संवैधानिक अवधारणा: एक अवधारणा के रूप में बंधुत्व अन्य संवैधानिक लक्ष्यों से अलग है। संवैधानिक अवधारणा के रूप में, यह अन्य अवधारणाओं के साथ भाईचारे का गहरा बंधन रखता है।

सकारात्मक अर्थ में एकरूपता की नस्ल और असहमति और विविधता को कुचलना नहीं। यह न तो अलग-थलग है और न ही अकेला।

बंधुत्व के विचार को एक संवैधानिक मानदंड और उपदेश के रूप में मान्यता प्राप्त है। यह एक संवैधानिक गुण है जिसे बनाए रखने और पोषित करने की आवश्यकता है।

स्पष्टता का मॉडल नहीं होने के बावजूद, और इसके निष्कर्ष के बावजूद यकीनन निराशाजनक होने के बावजूद, यह निर्णय मौजूदा कानून को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित नहीं करता है। बेहतर या बदतर के लिए, सुब्रमण्यम स्वामी मामले में सुप्रीम कोर्ट के फैसले के सौजन्य से, कानून मंत्रालय और अन्य, मानहानि को नागरिक अपराध के अलावा एक अपराध माना जाता है।

श्रेया सिंघल बनाम भारत संघ: श्रेया सिंघल के मामले की पृष्ठभूमि में, और सूचना प्रौद्योगिकी और सामाजिक नेटवर्किंग के समकालीन युग के संदर्भ में न्यायपालिका की ओर से मानहानि को अपराध से मुक्त करना कितना वांछनीय था।

श्रेया सिंघल का मामला अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के क्षेत्र में एक ऐतिहासिक निर्णय है। यह महाकाव्य मामला विभिन्न आयामों को सामने लाता है जो अनुच्छेद 19(ए) के महत्वपूर्ण पहलू हैं। धारा 66ए जिसकी व्यापक रूप से आलोचना की गई थी, इसकी व्यापकता, अस्पष्टता और भाषण पर इसके भयावह प्रभाव के कारण, सर्वोच्च न्यायालय ने इसे असंवैधानिक बताते हुए रद्द कर दिया था। हालांकि, स्वामी के मामले में मिश्रा जे ने एक अलग रास्ता अपनाया और बताया कि श्रेया सिंघल के मामले में जिस कैनवास पर बात की गई है, उसमें अंतर है। उस मामले में प्रावधान की संकीर्ण व्याख्या की गई थी। हालांकि, स्वामी के मामले में 'प्रतिष्ठा' भी शामिल थी और संकीर्ण व्याख्या का मामला नहीं था।

भयावह प्रभाव: कानूनी संदर्भ में 'भयावह प्रभाव' शब्द मूल रूप से एक ऐसी स्थिति का वर्णन करता है जहां किसी व्यक्ति या समूह के हितों पर दंड के डर से भाषण या आचरण को दबा दिया जाता है।

MOTORS VEHICLE ACT 1988/2019

Introduction

The Motor Vehicles (Amendment) Act, 2019 is an Act to amend the Motor Vehicles Act, 1988, with an objective of safety of Indian roads, bringing down the rate of violations in traffic, and reforming road transport management. It has come into operation on September 1, 2019, once it had passed in both Houses of Parliament. A long pending problem of a rise in road accidents has been associated with outdated and poor mechanisms of enforcement for traffic rules.

Key Objectives

- Improving Road Safety: Increased penalties for traffic violations
- Strengthening Licencing System: Reduction of issuance of counterfeit licenses
- Increased Compensation Arrangements: Compensation of accident victims as soon as possible
- Implementation of Automation: Encouragement of the use of technology in enforcing
- Environmental protection: Tackling Vehicle-induced Pollution.

Significant Changes

Tough Penalties for Traffic Violation

The amendment hiked the penalties substantially to scare away violations:

- ❖ Driving when drunk: ₹10,000 instead of ₹2,000
- ❖ Driving Without License: ₹5,000 instead of ₹500.
- ❖ Overspeeding: ₹1,000–₹2,000 for Light Motor Vehicles (LMVs), ₹2,000–₹4,000 for Medium and Heavy Motor Vehicles (MHVs).
- ❖ Not Wearing a Helmet: ₹1,000 and suspension of license for 3 months.

- ❖ Seat Belt Violation: ₹1,000.
- ❖ Road Accident Compensation
- ❖ Introduction of a cashless treatment policy for accident victims during the "golden hour" (first 60 minutes post-accident).
- ❖ Compensation for hit-and-run cases increased:
- ❖ Death: ₹2,00,000 (earlier ₹25,000).
- ❖ Grievous injury: ₹50,000 (earlier ₹12,500).

Good Samaritan Protection

- ★ Encourages bystanders to help accident victims without fear of harassment.
- ★ Ensures no civil or criminal liability for Good Samaritans acting in good faith.
- ★ Streamlined Licensing and Registration System
- ★ Requires Aadhaar-based verification to eliminate fictitious licenses.
- ★ Standardised test for assessment of skills of drivers
- ★ Digitizing vehicle registration processes to reduce hassles.

Aggregator Rules

Companies like Uber and Ola are covered under the Act, keeping in line with safety and security standards as well as price norms.

Vehicle Fitness and Emissions

- ➔ There has to be a fitness test every 15 years in case of private vehicles, and annually in case of commercial vehicles.
- ➔ Emission norms compliance is made sure through this, and it should reduce pollution.
- ➔ Electronic Surveillance
- ➔ Traffic violations are to be monitored through CCTV cameras, speed guns, as well as automatic number plate recognition systems.
- ➔ E-challans are issued

National Road Safety Board

A statutory body to guide the government on road safety measures, standards for the construction, and design of motor vehicles.

Impact of the Amendments

- ☐ *Accident Reduction* Severe fines are to be implemented so that there is a kind of discipline among road users.

Public awareness and enforcement have been increased.

- ☐ *Ease of Doing Business* The online license and registration procedure reduces red tape for the public and business.

Problems

- ➢ Public outcry over hefty fines.
- ➢ Implementation varies in states.
- ➢ Lack of infrastructures such as fewer traffic signals, signage, and poor road quality.

Criticism of the Act

- ❖ High Penalties: Critics argue that the heavy fines burden the lower-class population.
- ❖ Federalism Concerns: A few states opposed implementation on grounds of state autonomy over transport legislations.
- ❖ Infrastructure Readiness: Not ready to impose the new rule uniformly.

परिचय

मोटर वाहन (संशोधन) अधिनियम, 2019, मोटर वाहन अधिनियम, 1988 में संशोधन करने वाला एक अधिनियम है, जिसका उद्देश्य भारतीय सड़कों की सुरक्षा सुनिश्चित करना, यातायात नियमों के उल्लंघन की दर को कम करना और सड़क परिवहन प्रबंधन में सुधार करना है। यह 1 सितंबर, 2019 को प्रभाव में आया, जब इसे संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित कर दिया गया। सड़क दुर्घटनाओं में वृद्धि की एक दीर्घकालिक समस्या को यातायात नियमों के प्रवर्तन के लिए पुरानी और कमजोर व्यवस्थाओं से जोड़ा गया है।

मुख्य उद्देश्य

1. सड़क सुरक्षा में सुधार: यातायात उल्लंघनों के लिए जुर्माने में वृद्धि।
2. लाइसेंसिंग प्रणाली को सुदृढ़ बनाना: नकली लाइसेंस जारी करने में कमी।
3. मुआवजा व्यवस्था में सुधार: दुर्घटना पीड़ितों को शीघ्र मुआवजा।

4. स्वचालन का कार्यान्वयन: प्रवर्तन में प्रौद्योगिकी के उपयोग को प्रोत्साहन।
5. पर्यावरण संरक्षण: वाहन-जनित प्रदूषण से निपटना।

महत्वपूर्ण परिवर्तन

1. यातायात उल्लंघन के लिए कठोर जुर्माने
   अधिनियम के तहत जुर्मानों में भारी वृद्धि की गई:
   - शराब पीकर वाहन चलाने पर: ₹10,000 (पहले ₹2,000)।
   - बिना लाइसेंस वाहन चलाने पर: ₹5,000 (पहले ₹500)।
   - तेज गति से वाहन चलाने पर: हल्के मोटर वाहनों (LMVs) के लिए ₹1,000-₹2,000 और मध्यम व भारी मोटर वाहनों (MHVs) के लिए ₹2,000-₹4,000।
   - हेलमेट न पहनने पर: ₹1,000 और लाइसेंस 3 महीने के लिए निलंबित।
   - सीट बेल्ट न लगाने पर: ₹1,000।
2. सड़क दुर्घटना मुआवजा
   - "स्वर्णिम घंटे" (दुर्घटना के बाद पहले 60 मिनट) के दौरान पीड़ितों के लिए कैशलेस उपचार नीति की शुरुआत।
   - हिट एंड रन मामलों के मुआवजे में वृद्धि:
     - मृत्यु पर: ₹2,00,000 (पहले ₹25,000)।
     - गंभीर चोट पर: ₹50,000 (पहले ₹12,500)।
3. सुपरिचित नागरिक संरक्षण
   - दुर्घटना पीड़ितों की सहायता के लिए नागरिकों को प्रोत्साहित करना।
   - अच्छे इरादे से कार्य करने वाले नागरिकों पर कोई नागरिक या आपराधिक उत्तरदायित्व नहीं।
4. लाइसेंस और पंजीकरण प्रणाली में सुधार
   - नकली लाइसेंस समाप्त करने के लिए आधार-आधारित सत्यापन की आवश्यकता।
   - चालकों के कौशल के आकलन के लिए मानकीकृत परीक्षण।
   - वाहन पंजीकरण प्रक्रियाओं का डिजिटलीकरण।
5. एग्रीगेटर नियम
   - ओला और उबर जैसी कंपनियों को अधिनियम के दायरे में लाया गया, जिसमें सुरक्षा मानकों और मूल्य नियमों का पालन शामिल है।
6. वाहन की फिटनेस और उत्सर्जन
   - निजी वाहनों के लिए हर 15 वर्ष और वाणिज्यिक वाहनों के लिए हर वर्ष फिटनेस परीक्षण अनिवार्य।

- उत्सर्जन मानदंडों का अनुपालन सुनिश्चित करना।

7. इलेक्ट्रॉनिक निगरानी
    - सीसीटीवी, स्पीड गन और स्वचालित नंबर प्लेट पहचान प्रणाली के माध्यम से यातायात उल्लंघन की निगरानी।
    - ई-चालान जारी करना।
8. राष्ट्रीय सड़क सुरक्षा बोर्ड
    - सड़क सुरक्षा उपायों और मोटर वाहन निर्माण व डिजाइन के मानकों पर सरकार को सलाह देने के लिए एक वैधानिक निकाय।

संशोधन का प्रभाव

1. दुर्घटनाओं में कमी
    - कठोर जुर्मानों से सड़क उपयोगकर्ताओं में अनुशासन की भावना उत्पन्न होती है।
    - जन जागरूकता और प्रवर्तन में वृद्धि।
2. व्यवसाय करने में आसानी
    - ऑनलाइन लाइसेंस और पंजीकरण प्रक्रिया से लालफीताशाही में कमी।

समस्याएँ

1. भारी जुर्मानों पर जन आक्रोश।
2. राज्यों में कार्यान्वयन में असमानता।
3. यातायात सिग्नल, संकेतों और सड़क की खराब गुणवत्ता जैसी अवसंरचना की कमी।

अधिनियम की आलोचना

1. उच्च जुर्माने: भारी जुर्माने से निम्न वर्ग पर आर्थिक बोझ बढ़ता है।
2. संघवाद से संबंधित चिंताएँ: कुछ राज्यों ने परिवहन कानूनों पर राज्य स्वायत्तता का हवाला देते हुए कार्यान्वयन का विरोध किया।
3. अवसंरचना की तैयारी: नए नियमों को समान रूप से लागू करने के लिए तैयार नहीं।

Judicial Interpretations

1. National Insurance Co. Ltd. v. Swaran Singh (2004)

- Issue: Liability of the insurance company when the driver does not possess a valid driving license.
- Judgment: The Supreme Court held that an insurance company cannot escape liability solely on the ground of the driver's lack of a valid license unless the insurer proves willful negligence on the part of the owner.
- Significance: The liability of the insurer in motor accident claims was clarified.

2. United India Insurance Co. Ltd. v. Lehru and Others (2003)

- Issue: Whether the owner of a vehicle is liable if the driver has a forged license.
- Judgment: The Supreme Court held that the owner is not liable if he has taken reasonable care to ensure that the driver had a valid license.
- Significance: Shields owners from liability arising out of fake licenses when due diligence is performed.

3. Sarla Verma v. Delhi Transport Corporation (2009)

- Issue: Determination of compensation in motor accident cases.
- Judgment: The Court established a standard formula for calculating compensation based on the age of the deceased and their income.
- Significance: Standardized compensation methodology, reducing ambiguity in claims.

4. Raj Rani v. Oriental Insurance Co. Ltd. (2009)

- Issue: Compensation for loss of consortium and other non-pecuniary damages.
- Judgment: The Court underlined the importance of granting reasonable compensation for the emotional and social loss of dependents of the deceased.
- Significance: Strengthened the role of non-economic damages in accident cases.

5. Mukund Dewangan v. Oriental Insurance Co. Ltd. (2017)

- Issue: Interpretation of "light motor vehicle" under the Act.
- Judgment: The Supreme Court clarified that a driver of a light motor vehicle by license is permitted to drive transport and nontaxi vehicles belonging to that class.
- Significance: Cured confusion arising from misconstruction of what was licensable.

6. Kusum Lata v. Satbir (2011)

- Issue: That negligence was sine qua non for awarding compensation.
- Judgment: Negligence would have to be proved in a case of accidents unless the facts fell within exceptions carved out by no fault liability provisions.
- Significance: Clarified the role of negligence in claims under Section 166 of the Act.

7. Jiju Kuruvila v. Kunjujamma Mohan (2013)

- Issue: Awarding compensation for death of homemakers.
- Judgment: The Court recognized the economic contribution of homemakers and granted high compensation.
- Significance: Recognized the economic value of unpaid domestic labor.

8. Tamil Nadu State Transport Corporation v. Rajapriya (2005)

- Issue: Compensation for future prospects in accident claims.
- Judgment: It decided that future prospects of income have to be taken into consideration before awarding compensation.
- It opened the scope of providing compensation to the victims wider.

9. S. Rajaseekaran v. Union of India (2018)

- Issue: Implementation of road safety measures and the amendment to the Motor Vehicles Act
- Judgment: The Apex Court ordered the government to take immediate steps to reduce the occurrences of road accidents and death leading to the 2019 amendment.
- Significance: Triggered the implementation of stringent road safety measures in the 2019 amendment.

10. Anita Sharma v. New India Assurance Co. Ltd. (2021)

- Issue: Evidence of negligence in motor accident claims.
- Judgment: The Court ruled that the claimant is not obliged to prove negligence when death occurs due to a motor accident if there is sufficient evidence.
- Significance: Reduced the burden on claimants in the quest for compensation.

11. Jai Prakash v. National Insurance Co. Ltd. (2010)

- Issue: Settlement of motor accident claims within time.
- Judgment: The Supreme Court mandated lower courts to settle compensation claims in a timely manner.
- Import: Improved procedural efficiency in cases related to motor accidents.

12. Reshma Kumari v. Madan Mohan (2013)

- Issue: Multiplier method for uniform computation of compensation.
- Judgment: Restored the case of Sarla Verma with an emphasis on consistency in awarding compensation.
- Import: Standardized the method for the computation of compensation.

13. State of Maharashtra v. Kanchan Malhotra (2018)

- Issue: Jurisdiction of insurers while disallowing claims arising on account of lapses.
- Judgment: The Court of law held that the insurer would demonstrate evidence of policy lapse prior to disallowing any claims.
- Importance: No arbitrary claim rejection of an insurance company.

14. Pappu v. Vinod Kumar Lamba (2018)

- Issue: Res ipsa loquitur
- Judgment: The Court decided, where the accident would show evidence of negligence itself in respect of which the plea has been made.
- Significance: Simplified the proof requirements for accident victims.

न्यायिक व्याख्याएँ

1. राष्ट्रीय इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम स्वर्ण सिंह (2004)
   मुद्दा: जब चालक के पास वैध ड्राइविंग लाइसेंस नहीं हो, तो बीमा कंपनी की जिम्मेदारी।
   निर्णय: सुप्रीम कोर्ट ने माना कि बीमा कंपनी केवल चालक के पास वैध लाइसेंस न होने के आधार पर जिम्मेदारी से बच नहीं सकती, जब तक कि बीमाकर्ता यह साबित न करे कि वाहन

मालिक ने जानबूझकर लापरवाही की।
महत्व: मोटर दुर्घटना दावों में बीमा कंपनी की जिम्मेदारी स्पष्ट की गई।

2. यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम लेहरू और अन्य (2003)
मुद्दा: यदि चालक के पास जाली लाइसेंस हो तो वाहन मालिक की जिम्मेदारी।
निर्णय: सुप्रीम कोर्ट ने माना कि यदि वाहन मालिक ने यह सुनिश्चित करने में उचित सावधानी बरती है कि चालक के पास वैध लाइसेंस है, तो वह उत्तरदायी नहीं है।
महत्व: नकली लाइसेंस के मामलों में उचित परिश्रम करने पर मालिक की सुरक्षा।

3. सारला वर्मा बनाम दिल्ली परिवहन निगम (2009)
मुद्दा: मोटर दुर्घटनाओं में मुआवजे की गणना।
निर्णय: न्यायालय ने मृतक की आय और आयु के आधार पर मुआवजा गणना के लिए एक मानक सूत्र निर्धारित किया।
महत्व: मुआवजा गणना की प्रक्रिया को मानकीकृत किया।

4. राज रानी बनाम ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (2009)
मुद्दा: हानि के गैर-आर्थिक मुआवजे का महत्व।
निर्णय: मृतक के आश्रितों को भावनात्मक और सामाजिक हानि के लिए उचित मुआवजा देना आवश्यक है।
महत्व: दुर्घटना मामलों में गैर-आर्थिक क्षति की भूमिका को सुदृढ़ किया।

5. मुकुंद देवांगन बनाम ओरिएंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (2017)
मुद्दा: अधिनियम के तहत "लाइट मोटर वाहन" की व्याख्या।
निर्णय: सुप्रीम कोर्ट ने स्पष्ट किया कि लाइट मोटर वाहन के ड्राइविंग लाइसेंस वाला व्यक्ति उस वर्ग के परिवहन और गैर-परिवहन वाहन चला सकता है।
महत्व: लाइट मोटर वाहन से संबंधित भ्रम को समाप्त किया।

6. कुसुम लता बनाम सतबीर (2011)
मुद्दा: मुआवजा पाने के लिए दुर्घटना में लापरवाही का महत्व।

निर्णय: जब तक मामला "नो फॉल्ट" दायित्व के अंतर्गत न आता हो, लापरवाही साबित करना आवश्यक होगा।
महत्व: अधिनियम की धारा 166 के तहत दावों में लापरवाही की भूमिका स्पष्ट की।

7. कुरुविला बनाम कुंजुम्मा मोहन (2013)
मुद्दा: गृहणियों की मृत्यु पर मुआवजा।
निर्णय: न्यायालय ने गृहणियों के आर्थिक योगदान को मान्यता दी और उच्च मुआवजा प्रदान किया।
महत्व: घरेलू श्रम के अप्रत्यक्ष आर्थिक मूल्य को स्वीकार किया।

8. तमिलनाडु राज्य परिवहन निगम बनाम राजप्रिय (2005)
मुद्दा: दुर्घटना मामलों में भविष्य की आय का मुआवजा।
निर्णय: भविष्य की आय को मुआवजा निर्धारण में सम्मिलित करना आवश्यक है।
महत्व: पीड़ितों के लिए मुआवजा के दायरे को विस्तृत किया।
9. एस. राजसीकरण बनाम भारत संघ (2018)
मुद्दा: सड़क सुरक्षा उपायों का कार्यान्वयन।
निर्णय: सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार को सड़क दुर्घटनाओं को कम करने के लिए तत्काल कदम उठाने का निर्देश दिया, जिससे 2019 संशोधन को बल मिला।
महत्व: सड़क सुरक्षा उपायों के सख्त कार्यान्वयन को प्रेरित किया।

10. अनिता शर्मा बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (2021)
मुद्दा: मोटर दुर्घटना मामलों में लापरवाही का प्रमाण।
निर्णय: न्यायालय ने कहा कि यदि मोटर दुर्घटना से मृत्यु हुई हो और पर्याप्त सबूत उपलब्ध हों, तो लापरवाही साबित करना आवश्यक नहीं।
महत्व: दावेदारों के लिए मुआवजा पाने की प्रक्रिया को सरल बनाया।

11. जयप्रकाश बनाम नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (2010)
मुद्दा: मोटर दुर्घटना दावों का समय पर निपटारा।
निर्णय: सुप्रीम कोर्ट ने निचली अदालतों को मुआवजा दावों का शीघ्र निपटान करने का निर्देश

दिया।

महत्व: मामलों के प्रबंधन में प्रक्रियात्मक दक्षता में सुधार।

12. रेशमा कुमारी बनाम मदन मोहन (2013)

मुद्दा: मुआवजे की गणना के लिए गुणक विधि।

निर्णय: सारला वर्मा के मामले को बहाल किया और मुआवजा देने में स्थिरता पर जोर दिया।

महत्व: मुआवजा गणना की विधि को मानकीकृत किया।

13. महाराष्ट्र राज्य बनाम कंचन मल्होत्रा (2018)

मुद्दा: दावा अस्वीकृत करने में बीमा कंपनियों का अधिकार।

निर्णय: बीमाकर्ता को पॉलिसी समाप्ति के सबूत प्रदान करने होंगे।

महत्व: बीमा कंपनियों द्वारा मनमाने ढंग से दावा अस्वीकृति रोकी।

14. पप्पू बनाम विनोद कुमार लांबा (2018)

मुद्दा: रेस इप्सा लोकीटर का उपयोग।

निर्णय: जब दुर्घटना में स्वयं ही लापरवाही का प्रमाण हो, तो यह सिद्धांत लागू होता है।

महत्व: दुर्घटना पीड़ितों के लिए प्रमाण की आवश्यकता को सरल बनाया।

Relevance in Indian Context

India has one of the highest rates of road accidents in the world. The amendments are an effort to:

Align Indian traffic rules with international standards.

Check road fatalities and grievous injuries.

Promote road safety.

Key Provisions at a Glance

Provision	Pre-2019 Fine	Post-2019 Fine
Drunken Driving	₹2,000	₹10,000

Driving Without License	₹500	₹5,000
Overspeeding	₹400	₹1,000–₹2,000
Not Wearing Helmet	₹100	₹1,000
Seat Belt Violation	₹100	₹1,000
Juvenile Offenses (Parents/Owners)	₹1,000	₹25,000 + 3 yrs Jail

प्रावधान	**2019** से पहले का जुर्माना	**2019** के बाद का जुर्माना
नशे में गाड़ी चलाना	₹2,000	₹10,000
बिना लाइसेंस वाहन चलाना	₹500	₹5,000
तेज गति से वाहन चलाना	₹400	₹1,000–₹2,000
हेलमेट न पहनना	₹100	₹1,000
सीट बेल्ट न पहनना	₹100	₹1,000
नाबालिगों द्वारा वाहन चलाना (अभिभावक/मालिक)	₹1,000	₹25,000 + 3 साल की जेल

Summary Table

Aspect	**Motor Vehicles Act, 1988**	**Motor Vehicles (Amendment) Act, 2019**
Objective	Focused on basic traffic regulation and road safety.	Emphasizes road safety, modern traffic management, and automation.
Penalties for Violations	Relatively low fines for traffic violations.	Significantly increased penalties to deter violations.

Example of Fines	- Drunken Driving: ₹2,000 - No Helmet: ₹100	- Drunken Driving: ₹10,000 - No Helmet: ₹1,000
Licensing Process	Manual processes prone to fake licenses.	Aadhaar-based verification, digitization, and standardization.
Hit-and-Run Compensation	₹25,000 for death; ₹12,500 for injury.	₹2,00,000 for death; ₹50,000 for injury.
Golden Hour Treatment	No provision.	Cashless treatment during the golden hour (first 60 minutes).
Good Samaritan Law	No explicit protection.	Provides legal protection and immunity to Good Samaritans.
Road Safety Board	No national-level statutory body for road safety.	Establishes a National Road Safety Board for policy advice.
Electronic Enforcement	Minimal use of technology for enforcement.	Promotes electronic monitoring with CCTV, speed guns, etc.
Regulation of Aggregators	No mention of ride-sharing platforms like Uber, Ola, etc.	Includes specific provisions for regulating aggregators.
Juvenile Driving	Penalty for underage drivers was unclear.	Guardian/owner liable: ₹25,000 fine and 3 years' jail.
Fitness of Vehicles	Fitness tests were irregularly implemented.	Mandatory annual fitness test for commercial vehicles.
Pollution Control	Basic provisions for emission standards.	Stricter implementation of pollution control and fitness rules.
E-Challan System	Not part of the original Act.	Integrated e-challan system for transparency.

पहलू	मोटर वाहन अधिनियम, 1988	मोटर वाहन (संशोधन) अधिनियम, 2019

उद्देश्य	सड़क सुरक्षा और बुनियादी यातायात नियमों पर ध्यान केंद्रित।	सड़क सुरक्षा, आधुनिक यातायात प्रबंधन और स्वचालन पर जोर।
उल्लंघन के लिए जुर्माना	यातायात उल्लंघनों के लिए कम जुर्माना।	उल्लंघनों को रोकने के लिए जुर्माने में उल्लेखनीय वृद्धि।
उदाहरण जुर्माना	- नशे में गाड़ी चलाना: ₹2,000	- नशे में गाड़ी चलाना: ₹10,000
	- हेलमेट न पहनना: ₹100	- हेलमेट न पहनना: ₹1,000
लाइसेंस प्रक्रिया	नकली लाइसेंस की संभावना के साथ मैन्युअल प्रक्रियाएँ।	आधार-आधारित सत्यापन, डिजिटलीकरण और मानकीकरण।
हिट-एंड-रन मुआवजा	मौत पर ₹25,000; चोट पर ₹12,500।	मौत पर ₹2,00,000; चोट पर ₹50,000।
गोल्डन ऑवर ट्रीटमेंट	कोई प्रावधान नहीं।	दुर्घटना के पहले 60 मिनट में कैशलेस उपचार।
गुड समारिटन कानून	कोई स्पष्ट सुरक्षा नहीं।	भले व्यक्ति को कानूनी संरक्षण और प्रतिरक्षा प्रदान करता है।
सड़क सुरक्षा बोर्ड	राष्ट्रीय स्तर पर कोई सांविधिक निकाय नहीं।	नीति सलाह के लिए एक राष्ट्रीय सड़क सुरक्षा बोर्ड की स्थापना।
इलेक्ट्रॉनिक प्रवर्तन	प्रवर्तन के लिए तकनीक का न्यूनतम उपयोग।	सीसीटीवी, स्पीड गन आदि के साथ इलेक्ट्रॉनिक निगरानी को बढ़ावा।
एग्रीगेटर का विनियमन	उबर, ओला जैसे राइड-शेयरिंग प्लेटफॉर्म का उल्लेख नहीं।	एग्रीगेटर्स को विनियमित करने के लिए विशिष्ट प्रावधान।
नाबालिग	नाबालिग चालकों पर दंड स्पष्ट नहीं था।	अभिभावक/मालिक जिम्मेदार: ₹25,000

ड्राइविंग		जुर्माना और 3 साल जेल।
वाहन की फिटनेस	फिटनेस परीक्षण अनियमित रूप से किए गए।	वाणिज्यिक वाहनों के लिए वार्षिक अनिवार्य फिटनेस परीक्षण।
प्रदूषण नियंत्रण	उत्सर्जन मानकों के लिए बुनियादी प्रावधान।	प्रदूषण नियंत्रण और फिटनेस नियमों के सख्त कार्यान्वयन।

The Motor Vehicles (Amendment) Act, 2019 is a landmark reform aimed at improving road safety, ensuring transparency, and modernizing India's traffic management system. While its implementation faces hurdles, the Act lays a strong foundation for making Indian roads safer and more reliable.

CHAPTER I

Chapter I of the Motor Vehicles (Amendment) Act, 2019 defines the preliminary provisions of the act, including its scope, definitions, and key objectives. This chapter proposes amendments to the existing Motor Vehicles Act of 1988, focusing on road safety improvement, regulation of the transport industry, and traffic management improvement.

1. Title, Scope and Initiation

The act has hence been named the Motor Vehicles Act of 2019.

Scope: All over India, even in Jammu & Kashmir since the nullification of Article 370.

Commencement: The provisions commenced on 1 September 2019 and specific provisions announced at later dates.

2. Objectives of the Change Procedure

The key objectives of the 2019 Amendment are:

Improving Traffic Safety

Strictly dealing with reckless driving, overspeeding, and drunken driving.

Promoting compliance with highway laws so that road accidents and casualties decrease.

Accountability:

Holds automobile owners, operators, and manufacturers liable for deviation from the established safety and environmental requirements.

Digitization and Modernization:

- ➔ Introduce Technology-Driven Solutions for Vehicle Registration and License Issuance, Traffic Rule Enforcements.
- ➔ Protecting Vulnerable Road Users End
- ➔ Special emphasis on pedestrian and cyclist safety.
- ➔ Victim Compensation
- ➔ Cashless treatment with the rapid settlement of claims within the golden hour.

Revised Definitions:

- *Aggregator:* It is defined as a digital intermediary or marketplace for connecting passengers with drivers.
  Includes App-based Cab services such as Ola, Uber, etc.
  Unless otherwise directed to by the guidelines issued by the Central Government.
- *"Golden Hour":* This is the critical hour postincident and where immediate medical action may help salvage a life.
- *"Road Safety Board"*: Concerned with a committee established to advise the government on the requirements and policies for road safety.

New TERMS:

"National Registry of Driver Licenses: All driving licenses issued across India should have centralized digital database facilities, which would prevent duplications or fraud cases.

*Motor Vehicle Accident Fund:*A compensation fund formed mainly to pay to the victims of hit-and-run cases or accidents where the at-fault party is unidentified.

CHAPTER II

Chapter II of the Motor Vehicles (Amendment) Act, 2019 deals with licensing of drivers and conductors. It has dealt with the major issues concerning the issue, renewal, and management of driving licenses. The chapter amends the corresponding provisions in the Motor Vehicles Act, 1988, introducing technological upgrades, stricter rules, and centralized databases to improve efficiency and curb fraud.

1. Revision of Licensing Rules
1.1. Introduction of a National Register
National Driver's Licence Data Base
A central digital platform will be launched to capture and manage the entire licenses issued for driving nationwide.
This would reduce the duplication of chances and ensure that authentic copies only exist.
1.2 Students and Permanent License Streamline Processes
The issue of licenses has also become more robust and transparent:
Learners Permit:
Online issuance is now possible and candidates take their assessments online.
Permanent License:
Mandatory driving test requirements continue but are digitized to ensure transparency.
Qualifying requirements and minimum educational qualifications for professional road transport operators.
1.3 Reissuance of Licenses
Renewal Period Revised

The period for renewal of driving licenses has also been enhanced from 20 to 40 years of age and up to 5 years from the date of lapse, whichever is earlier.

Assessments for commercial licenses are tougher and held periodically.

2. Stricter Rules on Bans and Penalties

Section 19. Revocation or cancellation of a license:

Provision for suspension or cancellation of license on repeated offenses.

Intoxicated driving.

Reckless driving.

Violating the traffic rules.

Section 21: Approval on Licenses:

Now drivers are caught through electronic means hence an easier way of tracing back the re-offenders.

3. Digitization and integration of technology

Integrated Driving License Framework:

All licenses will henceforth be in standardized format with QR codes, which will enable immediate scrutiny by the relevant authorities.

Automation of Tests:

Issuing licenses now involves digitized driving tests to minimize manual errors and avoid corruption.

4. Codes for International Operators

It has simplified issuing and renewal of international driving permits.

The respective licensing authority can reissue lost or expired IDPs without requiring the holder to travel abroad.

5. Strict Punitive Measures for Violations

The amendment of 2019 improved on licensing violation penalties. Here are the lists:

Driving without a valid license: ₹5,000 as compared to ₹500 in the 1988 Act.

Underage driving: The guardian/owner of the vehicle is penalized, with the fines ranging from ₹25,000 and imprisonment.

6. Combating Unlawful Activities

The legislation has incorporated provisions to limit the grant of fake licenses.
Licensed information must be verified by the National Register before a license is granted.
Strict scrutiny of applicants, especially commercial drivers, to make sure they have the right training and fitness.
7. Good Samaritan Provisions
These license-granting authorities carry the noble mandate of spreading the Good Samaritan rules encouraging bystanders to act freely as first responders without fear of any kind of legal repercussions.
Effects of Chapter II.
Benefits:
Transparency: Digitization removes malpractices, for example, issuing duplicate or forged licenses.
Accountability-Strict punishments will deter violation, thus making roads safer.
Efficiency: Automated license acquisition and renewal speed up the process.
Safety: Focus on proper training and testing ensures competent drivers on the road.

Problems:
Implementation problems: Upgrading of infrastructure and technology is significantly expensive.
Awareness Gap: The people would be unable to accept the procedures of digitization.
Pressure on Licensing Authorities: Increased duties could exert stress on resources at Regional Transport Offices (RTOs).

अध्याय I

मोटर वाहन (संशोधन) अधिनियम, 2019 का अध्याय I अधिनियम की प्रारंभिक व्यवस्थाओं को परिभाषित करता है, जिसमें इसका क्षेत्र, परिभाषाएँ और मुख्य उद्देश्य शामिल हैं। यह अध्याय 1988 के मोटर वाहन अधिनियम में संशोधन का प्रस्ताव करता है, जिसमें सड़क सुरक्षा में सुधार, परिवहन उद्योग का नियमन और यातायात प्रबंधन को उन्नत बनाना शामिल है।

1. शीर्षक, क्षेत्र और प्रारंभ

1.1 शीर्षक: इसे "मोटर वाहन अधिनियम, 2019" नाम दिया गया है।
1.2 क्षेत्र: यह पूरे भारत में लागू होता है, जिसमें अनुच्छेद 370 की समाप्ति के बाद जम्मू-कश्मीर भी शामिल है।
1.3 प्रारंभ: इसकी विभिन्न धाराएँ 1 सितंबर 2019 से लागू की गईं और कुछ प्रावधान बाद में अधिसूचित किए गए।

2. संशोधन प्रक्रिया के उद्देश्य

अधिनियम में संशोधन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

2.1 यातायात सुरक्षा में सुधार:

- लापरवाह वाहन चालन, अत्यधिक गति और नशे में वाहन चालन पर सख्त कार्रवाई।
- सड़क दुर्घटनाओं और मृत्यु दर में कमी के लिए यातायात नियमों का पालन सुनिश्चित करना।

2.2 जवाबदेही:

- वाहन मालिकों, चालकों और निर्माताओं को सुरक्षा और पर्यावरणीय मानकों से विचलन के लिए जिम्मेदार ठहराना।

2.3 डिजिटलीकरण और आधुनिकीकरण:

- वाहन पंजीकरण और लाइसेंस जारी करने, यातायात नियमों के प्रवर्तन के लिए तकनीकी समाधान।

2.4 कमजोर सड़क उपयोगकर्ताओं की सुरक्षा:

- पैदल यात्रियों और साइकिल चालकों की सुरक्षा पर विशेष ध्यान।

2.5 पीड़ित मुआवजा:

- "गोल्डन आवर" (पहले 60 मिनट) में कैशलेस उपचार और मुआवजा प्रक्रिया को तेज करना।

3. परिभाषाओं में संशोधन

- एग्रीगेटर: डिजिटल माध्यम जो यात्रियों को चालकों से जोड़ता है। इसमें ऐप-आधारित कैब सेवाएँ जैसे ओला, उबर शामिल हैं।

- गोल्डन आवर: दुर्घटना के बाद का महत्वपूर्ण समय, जिसमें त्वरित चिकित्सा से जीवन बचाया जा सकता है।
- सड़क सुरक्षा बोर्ड: सड़क सुरक्षा पर नीतियों और आवश्यकताओं की सिफारिश हेतु स्थापित समिति।

4. नए प्रावधान

- राष्ट्रीय ड्राइवर लाइसेंस रजिस्टर: ड्राइविंग लाइसेंस के लिए केंद्रीय डिजिटल डेटाबेस, जो डुप्लिकेशन और धोखाधड़ी को रोकता है।
- मोटर वाहन दुर्घटना कोष: हिट-एंड-रन मामलों में पीड़ितों को मुआवजा प्रदान करने के लिए एक निधि।

अध्याय II

मोटर वाहन (संशोधन) अधिनियम, 2019 का अध्याय II ड्राइवरों और परिचालकों के लाइसेंसिंग से संबंधित है। इसमें ड्राइविंग लाइसेंस जारी करने, नवीनीकरण और प्रबंधन की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण संशोधन किए गए हैं। इस अध्याय ने 1988 के मोटर वाहन अधिनियम के प्रावधानों को संशोधित करते हुए तकनीकी उन्नयन, सख्त नियम, और केंद्रीय डेटाबेस की शुरुआत की है।

1. लाइसेंसिंग नियमों में संशोधन

1.1 राष्ट्रीय रजिस्टर की शुरुआत:

- राष्ट्रीय ड्राइवर लाइसेंस डेटाबेस: पूरे देश में जारी सभी लाइसेंसों का रिकॉर्ड रखने के लिए एक केंद्रीय डिजिटल मंच।
- यह डुप्लिकेट लाइसेंसों को रोकता है और केवल प्रामाणिक लाइसेंस सुनिश्चित करता है।

1.2 छात्र और स्थायी लाइसेंस प्रक्रियाओं का सरलीकरण:

- लर्नर परमिट: ऑनलाइन आवेदन और मूल्यांकन की सुविधा।
- स्थायी लाइसेंस: ड्राइविंग परीक्षण अनिवार्य और डिजिटलीकृत।
- व्यावसायिक सड़क परिवहन संचालकों के लिए न्यूनतम शैक्षिक योग्यता।

1.3 लाइसेंस का पुन: निर्गमन:

- नवीनीकरण अवधि को 20 से 40 वर्ष की आयु तक बढ़ाया गया है।

- वाणिज्यिक लाइसेंस के लिए कठोर मूल्यांकन और समय-समय पर परीक्षण।

2. प्रतिबंध और दंड पर सख्त नियम

- धारा 19: बार-बार अपराध पर लाइसेंस निलंबन या रद्दीकरण।
- धारा 21: इलेक्ट्रॉनिक माध्यम से चालकों को पकड़ने की व्यवस्था।

3. तकनीकी समावेशन और डिजिटलीकरण

- एकीकृत ड्राइविंग लाइसेंस ढाँचा: सभी लाइसेंस में QR कोड शामिल होंगे, जो तत्काल सत्यापन सुनिश्चित करेंगे।
- स्वचालित परीक्षण: ड्राइविंग परीक्षण प्रक्रिया को डिजिटलीकृत किया गया।

4. अंतरराष्ट्रीय संचालन के लिए प्रावधान

- अंतरराष्ट्रीय ड्राइविंग परमिट के लिए प्रक्रिया सरलीकृत।
- खोए या समाप्त IDP का पुनः निर्गमन स्थानीय प्राधिकारी द्वारा किया जा सकता है।

5. उल्लंघनों के लिए सख्त दंड

- बिना लाइसेंस गाड़ी चलाना: ₹5,000 (1988 में ₹500 था)।
- नाबालिग ड्राइविंग: अभिभावक/वाहन मालिक पर ₹25,000 का जुर्माना और 3 साल की सजा।

6. गैरकानूनी गतिविधियों पर नियंत्रण

- फर्जी लाइसेंस जारी करने पर रोक।
- राष्ट्रीय रजिस्टर से सत्यापन के बाद ही लाइसेंस जारी होगा।
- विशेष रूप से व्यावसायिक चालकों के लिए सख्त प्रशिक्षण और फिटनेस मानदंड।

7. गुड समारिटन प्रावधान

- लाइसेंसिंग प्राधिकरण ने गुड समारिटन नियमों को बढ़ावा दिया, ताकि लोग कानून के डर के बिना प्रथम उत्तरदाता बनें।

अध्याय II के प्रभाव

लाभ:

- पारदर्शिता: डिजिटलीकरण से फर्जी लाइसेंस जारी करने जैसी कुप्रथाएँ समाप्त होती हैं।
- जवाबदेही: सख्त दंड उल्लंघन को रोकते हैं, जिससे सड़कें सुरक्षित बनती हैं।
- क्षमता: स्वचालित लाइसेंस प्रक्रिया तेजी से काम करती है।
- सुरक्षा: उचित प्रशिक्षण और परीक्षण से सक्षम चालक सुनिश्चित होते हैं।

समस्याएँ:

- प्रभावन कार्यान्वयन: बुनियादी ढाँचे और तकनीकी उन्नयन की लागत अधिक है।
- जागरूकता की कमी: जनता को डिजिटलीकरण की प्रक्रियाएँ अपनाने में कठिनाई हो सकती है।
- प्राधिकरण पर दबाव: क्षेत्रीय परिवहन कार्यालयों (RTOs) पर अतिरिक्त कार्यभार।

CHAPTER III

Chapter III of the Motor Vehicles (Amendment) Act, 2019, addresses the registration of motor vehicles, aiming to simplify the process, enhance transparency, and align it with contemporary requirements. This chapter embodies the government's dedication to leveraging technology for improved efficiency and ensuring that vehicles operating on Indian roads adhere to safety and environmental standards.

1. The Significance of Registration

When you own a vehicle, this process is somewhat like giving it a legal life. It connects your vehicle to a database that is useful for the authorities to

- ➢ Ensures it conforms to safety and emission standards.
- ➢ Monitor ownership in case of theft or accidents.
- ➢ Monitor fitness and roadworthiness over time.

2. Registration process is highly altered.

2.1. National Register for Vehicles

- ➔ A central National Register of Motor Vehicles has been established.

➔ It keeps all vehicle registration in one place, reducing fraud and duplication.

➔ For example, if you transfer your registration to another state, then all of your details are already in the system, making it easy to transfer.

2.2 Provisional and Permanent Registration

➔ The legislation elucidates the parameters surrounding temporary registration:

➔ A vehicle sold by dealers needs to be registered before it is taken to road.

➔ Registration must be done immediately so that all the vehicles appearing on the road are registered.

2.3. Inclusion of Vehicle Scrapping Policy

➔ There is a scrapping policy included as one important addition.

➔ Older vehicles that do not meet the standards on fitness or emissions should be deregistered and scrapped.

➔ This reduces pollution and promotes safety on the roads.

3. Fitness Certification

The "fitness" of a motor vehicle is the ability to safely operate on roadways:

★ Private vehicles are required to renew registration after every 15 years of fitness tests after every 5 years.

★ Commercial vehicles are required to possess fitness certificates every two years initially and thereafter once a year.

★ New laws for the removal of hazardous vehicles from public roads and greater respect to environmental standards have come into effect.

4. Dealer Authorization

➢ Dealers can now issue temporary registrations.

➢ This reduces the burden of RTOs and ensures that their customers receive services more promptly.

5. Registration Related Road Safety Measures

5.1. High-Security Registration Plates (HSRP) Vehicles must carry high-security registration plates having a tamper-proof design from now on.

- Easy tracing of the stolen vehicles.
- Better enforcement of traffic rules.

5.2. Color-coded Stickers Stickers for the vehicles are introduced according to their fuel types, for instance, CNG, diesel, and petrol. This helps the authorities to trace and monitor the pollution level better.

6. Reinforced Incarceration for Crimes of Registry

Failure to register: ₹5,000 (earlier ₹200).
Driving an unregistered vehicle: ₹10,000.

- Forged registration certificates: Heavier punishment and the risk of sequestration of the vehicle.
- These measures are created to instill the sense of responsibility among vehicle owners.

7. Emphasis on Convenience to Citizens

7.1 Transfer of Ownership Facilitation

An online title transfer system makes the selling or donation of a vehicle very easy.
For example, if you sell your car, the new owner's name can be updated digitally, preventing misuse under your name.

7.2. State-to-State Transfer

Moving to another state? No longer a need to bother about the copious and intricate process of re-registration. The centralized database makes it easier to update your registration details even more efficiently.

8. Issues and Social Influences

While these features are intended to promote transparency and safe road usage, there are some raised concerns:

Implementation Problems: For small dealers and RTOs, getting accustomed to new digital systems could be a problem. Cognition Inequality: Very many citizens do not know the importance of high-security plates or fitness certificates. Cost of Compliance Vehicle owners feel the weight of these HSRP, stickers, and fitness tests that are really critical but well required for safety. Human-Centric View Chapter III takes the vehicle to mean not only a conveyance but also a safe, legal, and responsible entity upon the road. Here are the changes: Safeguard both yourself and other people from incidents caused by dangerous vehicles. Promote responsible environmentalism by phasing out old, polluting vehicles. Digitize the ease of convenience and transparency about managing ownership.

Section	**Provision**	**Key Features**
Section 2	Definitions	Includes definitions for terms such as "aggregator," "golden hour," "National Register of Driving Licenses," and "motor vehicle accident fund."
Section 19	Disqualification or Revocation of Driving License	Empowers authorities to disqualify or revoke a license for repeat violations like rash driving, drunken driving, etc.
Section 21	Suspension of Licenses for Certain Offenses	Allows suspension of licenses for specific offenses, such as overspeeding and dangerous driving.
Section 25A	National Register of Driving Licenses	Establishes a centralized database to prevent duplication and ensure easy access to driving license records nationwide.
Section 39	Necessity of Vehicle Registration	Mandates registration of all motor vehicles before use on roads, with penalties for unregistered vehicles.
Section 41	Registration of Vehicles	Streamlines the process for registering motor vehicles, including temporary and permanent registrations.
Section 50	Transfer of Ownership	Simplifies procedures for transferring vehicle ownership, especially between states, with the integration of centralized records.
Section 56	Certificate of Fitness	Requires commercial vehicles to undergo periodic fitness checks, ensuring compliance with safety and emission

		standards.
Section 63A	National Register of Motor Vehicles	Introduces a centralized database for all motor vehicle registrations to enable transparency and easy access to data.
Section 66A	Guidelines for Aggregators	Specifies compliance standards for aggregators like Ola and Uber, ensuring safety, transparency, and fair pricing.
Section 112	Limits of Speed	Prescribes speed limits for different types of roads and vehicles, with penalties for overspeeding.
Section 134A	Protection of Good Samaritans	Provides immunity to individuals assisting accident victims, encouraging public participation in rescue efforts without fear of legal trouble.
Section 145A	Motor Vehicle Accident Fund	Establishes a fund for providing compensation to victims of hit-and-run cases and accidents where the at-fault party is unknown.
Section 164	Enhanced Compensation for Accidents	Specifies higher compensation amounts for deaths and injuries due to road accidents, including immediate cashless treatment during the golden hour.
Section 182A	Penalty for Aggregators for Violations	Aggregators can be fined up to ₹1 lakh for non-compliance with guidelines.
Section 194A	Penalty for Driving Without Insurance	Fine of ₹2,000 for first-time offenders and ₹4,000 for repeat offenders.
Section 194B	Penalty for Not Wearing Seat Belts	Fine of ₹1,000 for not wearing a seatbelt.
Section 194C	Penalty for Overloading Passengers	Fine of ₹1,000 per extra passenger and cancellation of the driver's license for overloading.
Section 194D	Penalty for Driving Without Helmets	Fine of ₹1,000 and suspension of driving license for three months for not wearing a helmet.
Section 199A	Accountability of Juvenile Offenders	Imposes fines and imprisonment on guardians or vehicle owners in cases where juveniles are caught driving and committing offenses.
Schedules	Notified under the Act	- First Schedule: Forms related to licenses, permits, and registration.

अध्याय III

मोटर वाहन (संशोधन) अधिनियम, 2019 का अध्याय III मोटर वाहनों के पंजीकरण से संबंधित है। इसका उद्देश्य इस प्रक्रिया को सरल बनाना, पारदर्शिता बढ़ाना और इसे समकालीन आवश्यकताओं के अनुरूप बनाना है। यह अध्याय तकनीकी का उपयोग कर दक्षता सुधारने और यह सुनिश्चित करने के लिए सरकार की प्रतिबद्धता को दर्शाता है कि भारतीय सड़कों पर चलने वाले वाहन सुरक्षा और पर्यावरण मानकों का पालन करें।

पंजीकरण का महत्व

वाहन का पंजीकरण उसे कानूनी रूप से वैध बनाता है और उसे एक डेटाबेस से जोड़ता है, जो निम्नलिखित कार्यों में सहायक है:

- यह सुनिश्चित करता है कि वाहन सुरक्षा और उत्सर्जन मानकों का पालन करता है।
- चोरी या दुर्घटना की स्थिति में स्वामित्व की निगरानी करना।
- समय के साथ वाहन की फिटनेस और रोडवर्दीनेस की जांच करना।

पंजीकरण प्रक्रिया में महत्वपूर्ण बदलाव

1. राष्ट्रीय मोटर वाहन रजिस्टर का प्रावधान

- एक केंद्रीकृत राष्ट्रीय मोटर वाहन रजिस्टर स्थापित किया गया है।
- यह सभी वाहन पंजीकरण को एक जगह संग्रहित करता है, जिससे धोखाधड़ी और डुप्लिकेशन को रोका जा सके।
- उदाहरण: यदि आप अपना पंजीकरण एक राज्य से दूसरे राज्य में स्थानांतरित करते हैं, तो आपके सभी विवरण पहले से सिस्टम में होंगे, जिससे प्रक्रिया आसान हो जाएगी।

2. अस्थायी और स्थायी पंजीकरण

- अधिनियम अस्थायी पंजीकरण के मानकों को स्पष्ट करता है:
    - डीलरों द्वारा बेचे गए वाहन सड़क पर ले जाने से पहले पंजीकृत होने चाहिए।

- सभी वाहनों का तुरंत पंजीकरण अनिवार्य है।

3. वाहन स्क्रैपिंग नीति का समावेश

- अधिनियम में एक महत्वपूर्ण जोड़ वाहन स्क्रैपिंग नीति है।
- पुराने वाहन, जो फिटनेस या उत्सर्जन मानकों को पूरा नहीं करते, उन्हें पंजीकरण से हटा दिया जाएगा और स्क्रैप कर दिया जाएगा।
- इससे प्रदूषण कम होगा और सड़कों पर सुरक्षा बढ़ेगी।

वाहन फिटनेस प्रमाणन

- मोटर वाहन की "फिटनेस" सड़क पर सुरक्षित संचालन की क्षमता है:
  - निजी वाहनों को हर 15 साल बाद पंजीकरण नवीनीकरण की आवश्यकता होगी, और उसके बाद हर 5 साल पर फिटनेस टेस्ट करवाना होगा।
  - वाणिज्यिक वाहनों को पहले दो साल में फिटनेस प्रमाणपत्र लेना होगा और उसके बाद हर साल।
- खतरनाक वाहनों को सार्वजनिक सड़कों से हटाने और पर्यावरणीय मानकों को महत्व देने के नए नियम लागू किए गए हैं।

डीलर प्राधिकरण

- अब डीलर अस्थायी पंजीकरण जारी कर सकते हैं।
- इससे क्षेत्रीय परिवहन कार्यालय (आरटीओ) का भार कम होगा और ग्राहकों को शीघ्र सेवा मिलेगी।

सड़क सुरक्षा से जुड़े पंजीकरण उपाय

1. उच्च सुरक्षा पंजीकरण प्लेट्स **(HSRP)**

- वाहनों में अब उच्च सुरक्षा पंजीकरण प्लेट्स लगाना अनिवार्य है, जो छेड़छाड़-रहित डिज़ाइन वाली होंगी।
- चोरी हुए वाहनों का आसानी से पता लगाया जा सकेगा।
- यातायात नियमों के बेहतर प्रवर्तन में मदद मिलेगी।

2. रंग-कोडित स्टीकर्स

- वाहनों के लिए ईंधन प्रकार (जैसे CNG, डीज़ल, पेट्रोल) के आधार पर स्टीकर्स लागू किए गए हैं।
- इससे अधिकारियों को प्रदूषण स्तर की बेहतर निगरानी में सहायता मिलेगी।

पंजीकरण से संबंधित अपराधों पर सख्त दंड

- पंजीकरण न करवाने पर: ₹5,000 (पहले ₹200 था)।
- पंजीकरण के बिना वाहन चलाने पर: ₹10,000।
- जाली पंजीकरण प्रमाणपत्र बनाने पर: कठोर दंड और वाहन को जब्त करने का प्रावधान।
- इन उपायों का उद्देश्य वाहन मालिकों में जिम्मेदारी की भावना विकसित करना है।

नागरिकों के लिए सुविधाएं

1. स्वामित्व हस्तांतरण में सहूलियत

- ऑनलाइन शीर्षक हस्तांतरण प्रणाली से वाहन बेचने या दान करने की प्रक्रिया सरल हो गई है।
- उदाहरण: यदि आप अपनी कार बेचते हैं, तो नए मालिक का नाम डिजिटल रूप से अपडेट किया जा सकता है, जिससे आपके नाम पर दुरुपयोग रोका जा सके।

2. राज्य-से-राज्य पंजीकरण स्थानांतरण

- दूसरे राज्य में स्थानांतरित हो रहे हैं? अब दोबारा पंजीकरण की जटिल प्रक्रिया से परेशान होने की जरूरत नहीं। केंद्रीकृत डेटाबेस से आपका पंजीकरण विवरण आसानी से अपडेट हो जाएगा।

समस्याएं और सामाजिक प्रभाव

- क्रियान्वयन की चुनौतियां: छोटे डीलरों और आरटीओ के लिए नई डिजिटल प्रणालियों को अपनाना मुश्किल हो सकता है।
- जागरूकता का अभाव: बहुत से नागरिक उच्च सुरक्षा प्लेट्स या फिटनेस प्रमाणपत्रों के महत्व को नहीं समझते।
- पालन की लागत: वाहन मालिक इन HSRP, स्टीकर्स और फिटनेस परीक्षणों की लागत से परेशान हो सकते हैं।

एक मानवीय दृष्टिकोण

अध्याय III में वाहन का अर्थ केवल एक परिवहन साधन नहीं है, बल्कि एक ऐसा सुरक्षित, कानूनी और जिम्मेदार इकाई है, जो सड़क पर अन्य लोगों की सुरक्षा को प्रभावित करती है।

सारणी: महत्वपूर्ण प्रावधान और विशेषताएं

धारा	प्रावधान	मुख्य विशेषताएं
धारा 2	परिभाषाएं	"एग्रीगेटर," "गोल्डन ऑवर," "राष्ट्रीय ड्राइविंग लाइसेंस रजिस्टर," और "मोटर वाहन दुर्घटना कोष" जैसे शब्दों की परिभाषा शामिल।
धारा 19	लाइसेंस अयोग्यता/रद्दीकरण	बार-बार उल्लंघन (जैसे लापरवाह ड्राइविंग, नशे में ड्राइविंग) पर लाइसेंस रद्द करने का अधिकार।
धारा 21	कुछ अपराधों के लिए निलंबन	ओवरस्पीडिंग और खतरनाक ड्राइविंग जैसे अपराधों के लिए लाइसेंस निलंबित करने का प्रावधान।

धारा 25A	राष्ट्रीय ड्राइविंग लाइसेंस रजिस्टर	डुप्लिकेशन रोकने और रिकॉर्ड्स तक आसान पहुंच सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीकृत डेटाबेस की स्थापना।
धारा 39	वाहन पंजीकरण की आवश्यकता	सड़क पर उपयोग से पहले सभी मोटर वाहनों का पंजीकरण अनिवार्य, बिना पंजीकरण वाले वाहनों पर दंड।
धारा 41	वाहनों का पंजीकरण	अस्थायी और स्थायी पंजीकरण की प्रक्रिया को सुव्यवस्थित किया।
धारा 50	स्वामित्व का हस्तांतरण	केंद्रीयकृत रिकॉर्ड के साथ राज्यों के बीच वाहन स्वामित्व हस्तांतरण की प्रक्रिया को सरल किया।
धारा 56	फिटनेस प्रमाणपत्र	वाणिज्यिक वाहनों के लिए समय-समय पर फिटनेस जांच आवश्यक, जिससे सुरक्षा और उत्सर्जन मानकों का पालन हो।
धारा 63A	राष्ट्रीय मोटर वाहन रजिस्टर	सभी मोटर वाहन पंजीकरण के लिए पारदर्शिता और डेटा तक आसान पहुंच सुनिश्चित करने हेतु केंद्रीकृत डेटाबेस।
धारा 66A	एग्रीगेटर्स के लिए दिशानिर्देश	ओला और उबर जैसे एग्रीगेटर्स के लिए सुरक्षा, पारदर्शिता और उचित मूल्य निर्धारण सुनिश्चित करने वाले अनुपालन मानक।
धारा 112	गति की सीमाएं	विभिन्न प्रकार की सड़कों और वाहनों के लिए गति सीमा निर्धारित, ओवरस्पीडिंग पर दंड।
धारा 134A	गुड समैरिटन का संरक्षण	दुर्घटना पीड़ितों की मदद करने वाले व्यक्तियों को कानूनी परेशानी से बचाने के लिए प्रतिरक्षा प्रदान करता है।
धारा 145A	मोटर वाहन दुर्घटना कोष	हिट-एंड-रन मामलों और अज्ञात दोषी की दुर्घटनाओं के पीड़ितों को मुआवजा प्रदान करने के लिए कोष की स्थापना।
धारा 164	दुर्घटनाओं के लिए बढ़ा हुआ मुआवजा	सड़क दुर्घटनाओं के कारण मौतों और चोटों के लिए अधिक मुआवजा राशि, "गोल्डन ऑवर" के दौरान कैशलेस उपचार शामिल।

धारा 182A	एग्रीगेटर्स के लिए उल्लंघन दंड	एग्रीगेटर्स द्वारा दिशानिर्देशों का पालन न करने पर ₹1 लाख तक का जुर्माना।
धारा 194A	बीमा के बिना वाहन चलाने पर दंड	पहली बार के लिए ₹2,000 का जुर्माना, पुनरावृत्ति पर ₹4,000।
धारा 194B	सीट बेल्ट न पहनने पर दंड	सीट बेल्ट न पहनने पर ₹1,000 का जुर्माना।
धारा 194C	यात्रियों की ओवरलोडिंग पर दंड	प्रति अतिरिक्त यात्री ₹1,000 का जुर्माना और चालक का लाइसेंस रद्द।
धारा 194D	हेलमेट न पहनने पर दंड	हेलमेट न पहनने पर ₹1,000 का जुर्माना और लाइसेंस तीन महीने के लिए निलंबित।
धारा 199A	नाबालिग अपराधियों की जिम्मेदारी	नाबालिग द्वारा वाहन चलाने और अपराध करने के मामलों में अभिभावकों या वाहन मालिकों पर जुर्माना और कैद का प्रावधान।
अनुसूचियां	अधिनियम के तहत अधिसूचित	प्रथम अनुसूची: लाइसेंस, परमिट, और पंजीकरण से संबंधित प्रपत्र।

CHAPTER IV

Chapter IV of the Motor Vehicles (Amendment) Act, 2019 focuses on control of traffic and regulation of offenses related to motor vehicles, along with corresponding penalties. This chapter is designed to enhance road safety, reduce traffic violations, and ensure that offenders are penalized appropriately. It amends various sections of the Motor Vehicles Act, 1988, and introduces stricter provisions to improve compliance with traffic laws.

Crucial Provisions and Amendments

1.1. Enhanced Fines and Penalties

One of the most important features of Chapter IV is the increase in fines and penalties for most traffic violations. The intention is to make traffic violations more expensive and thus discourage rash driving.

- ➢ Exceeding Speed: ₹1,000-₹2,000 for private vehicles (earlier ₹400-₹500).
- ➢ Driving under Influence: ₹10,000 (earlier ₹2,000), and the driving license may be suspended.
- ➢ Not Wearing Helmets: A fine of ₹1,000 for two-wheeler riders not wearing helmets (earlier ₹100).
- ➢ Overloading: A fine of ₹1,000 per extra passenger for vehicles overloaded beyond their seating capacity.

1.2. Stricter Rules for Juvenile Offenders

A major change is the handling of juvenile offenders. If a juvenile commits a road traffic violation, the vehicle owner or guardian will face fines and imprisonment.
If the child is caught driving, the vehicle registration is canceled, and the guardian held accountable.

1.3. Licensing and Permits for Drivers

The right to a valid driver's license has been made more obligatory, with the establishing of National Registers for licences. Commercial driver permits face increased scrutiny with periodic checks on medical fitness and training.

2. Provisions on Traffic Offenses and Violations

2.1. Hazardous Driving

Rash driving and dangerous driving are now non-bailable offenses under the Act.
Drivers who cause significant injuries or death can even face heavy jail time besides heavy fines. This should reduce accidents due to reckless driving.

2.2. Use of Mobile Phones

Use of mobile while driving without hands-free set is a serious offense besides attracting heavy fines.

The penalty for this crime is ₹5,000 as a measure to control drunken driving.

2.3. Drunk Driving

Drunk driving has been made a more serious offense with stricter penalties:

- ➔ First-time offenders: ₹10,000 or 6 months imprisonment
- ➔ Repeat offenders: ₹15,000 or 1-year imprisonment
- ➔ Driving license can be suspended for 6 months

2.4. Vehicle Pollution

All the vehicles must conform to the pollution control norms according to the Act

Pollution control check will be even tougher and the ones failing those checks are fined

Fine for driving without having a valid PUC (Pollution Under Control) certificate is as high as ₹1,000.

2.5. Driving Without Seat Belts

Violations for both the drivers and passengers driving without their seat belts

A person driving without a seatbelt while sitting in the front seats will have to face a fine of ₹1,000.

2.6. Parking

Parking violators will face a penalty:

- ❖ Parking violations such as parking in no-parking zones or in reserved spaces for special categories (handicapped, etc.) are penalized with:
- ❖ A fine of ₹2,000 for unauthorized parking.

3. Protection of Good Samaritans

Chapter IV also introduces a very important provision that protects Good Samaritans, who are people assisting accident victims. Good Samaritans shall not be liable for any legal proceedings so long as they act in good faith and provide immediate assistance to accident

victims. This provision encourages people to help accident victims without the fear of being dragged into unnecessary legal issues.

4. Technology Integration and Traffic Management

4.1. Introduction of E-challans

E-challans (electronic challans) for traffic violations have been introduced in order to make the enforcement process more efficient and transparent. Violators will be issued electronic fines directly to their mobile numbers or email addresses.

4.2. Surveillance and Monitoring

The Act promotes the use of CCTV cameras and other surveillance systems to monitor traffic behavior and ensure that offenders are tracked and penalized. Traffic violations captured by CCTV cameras will be automatically uploaded to the central database for appropriate action.

5. Focus on Road Safety Measures

5.1. Road Safety Audits

The government will conduct regular road safety audits to identify accident-prone areas and implement remedial measures such as better signage, lighting, and infrastructure improvements.

5.2. Training and Awareness Programs

The Act mandates that drivers and conductors undergo training programs in road safety, defensive driving, and first aid to improve overall awareness and responsibility.

6. Key Penalties under Chapter IV

Offense	Penalty
★ Over-speeding	Fine of ₹1,000 to ₹2,000 for private vehicles

- ★ Drunken driving ₹10,000 or 6 months of imprisonment
- ★ Helmet not worn ₹1,000
- ★ Overloading ₹1,000 for each extra passenger
- ★ Mobile phone usage while driving ₹5,000
- ★ Seatbelt not worn ₹1,000
- ★ Parking without authorization ₹2,000
- ★ Polluting vehicles (no PUC) ₹1,000

7. Challenges and Considerations

- Implementation of technology: e-challans and surveillance systems will face challenges in the absence of technology in rural or remote areas.
- Awareness of new penalties: Many road users may not be conscious of the enhanced penalties as well as the consequences associated with non-compliance.
- Consistency in enforcement: Improved coordination between law enforcement bodies will be needed to establish consistent enforcement of these penalties among states.

The fourth chapter of the Motor Vehicles (Amendment) Act, 2019 marks an era for stricter regulation in respect to traffic offenses and road safety. This has been attempted by increasing the quantum of penalties, inclusion of technology, and even by creating provisions for Good Samaritans, and to further promote safe driving culture along with better accountability. As it is directed to create a compliance culture in respect to Indian roads along with road safety and enhanced technology and law enforcement.

CHAPTER X

Chapter X of the Motor Vehicles Act focuses on no-fault liability, a principle designed to ensure that victims of motor vehicle accidents receive prompt financial relief, regardless of who caused the accident. This chapter reflects the legislature's attempt to balance justice and practicality by alleviating the burden of proving fault in certain types of accidents, thereby promoting social welfare and reducing litigation delays.

Immediate Compensation: Immediate financial recompense to the victim or family in case death or permanent disabling results from an accident arising out of and in the course of motor vehicle use.

No Need to Prove Fault: Victim or claimant need not prove fault or negligence on the part of the driver or owner.

Simplified Legal Process: The very mechanism attempts to avoid drawn-out litigation, thereby achieving quicker dispensation of money.

Legal Overriding: This chapter overrides conflicting provisions in other laws to ensure consistent application.

Section	Provision	Explanation
Section 140	Liability to Pay Compensation in Certain Cases	Imposes liability on vehicle owners to pay fixed compensation for accidents causing death or permanent disablement, irrespective of fault.
Section 141	Provisions as to Other Right to Claim Compensation	Victims or claimants can still seek additional compensation under other laws or through civil suits.
Section 142	Permanent Disablement Defined	Enumerates injuries that qualify as permanent disablement, including loss of limbs, eyesight, or severe fractures.
Section 143	Applicability of Chapter X	Clarifies that this chapter applies only to accidents arising from the use of motor vehicles.
Section 144	Overriding Effect of Chapter X	Declares that the provisions of this chapter will prevail over other inconsistent laws to ensure uniformity.

Detailed Analysis of Provisions

Section 140: No-Fault Liability

This is the crux of Chapter X and directs that the owner of a vehicle involved in an accident shall be liable to make compensation, irrespective of any question of fault or negligence on his part.

Compensation Amounts:

- ➢ Death: ₹50,000 under the 2019 Act; previously ₹25,000.
- ➢ Permanent Disablement: ₹25,000 under the 2019 Act; previously ₹12,500.

Section 141: Additional Rights to Victims

- Enables victims to claim further redressal
- File civil suits for damages.
- Compensation under other chapters of the Motor Vehicles Act, such as Chapter XI for third-party insurance.
- It ensures that the compensation awarded under Section 140 does not prevent the victim from claiming higher amounts through other legal means.

Section 142: Permanent Disablement

- ➢ Defines "permanent disablement" in an all-inclusive manner to include:
- ➢ Loss of limbs.
- ➢ Permanent loss of eyesight or hearing.
- ➢ Severe fractures or injuries that result in permanent incapacitation.

Section 143: Applicability Limits no-fault liability only to motor vehicle accidents to avoid its misuse in cases not related to motor vehicles.

Section 144: Superseding Provisions Proclaims that the provisions of Chapter X shall prevail over any inconsistent laws or provisions.

Key Features of No-Fault Liability

- ★ Compensation Mechanism Simplified
- ★ Victims do not have to prove fault or negligence, thus saving time and legal costs.
- ★ Focus on Victim Welfare

- ★ Places emphasis on the financial security of victims rather than finding fault.
- ★ Fixed Compensation
- ★ Gives confidence about the sums of compensation so that any delay in quantifying the loss is not created.
- ★ Security of Legal Claim
- ★ Safeguards victims' claims for further claims against civil court or through insurance schemes.

Amendments Made to the Motor Vehicles (Amendment) Act, 2019

I. Better Compensation

Section 140 compensated amounts were doubled due to inflation and rise in price of commodities of daily consumptions.

II. Permanent Disability Widened

More conditions were added to Section 142 to make sure it covers more cases.

Procedure Simplification

III. Technology-based and quick track procedures so that the claim is processed without much delay.

No-Fault Liability vs. Fault-Based Liability

Aspect	No-Fault Liability (Chapter X)	Fault-Based Liability (Chapter XI)
Proof of Fault	Not required.	Required to establish negligence or fault.
Compensation	Fixed amounts (e.g., ₹50,000 for death).	Varies based on the extent of fault and damages proven.
Time for Relief	Immediate.	May take longer due to litigation.
Legal Process	Simplified.	Complex, involving litigation and evidence gathering.

Criticism and Challenges

A. *Lack of Sufficient Compensation* Fixed compensation amounts, even with an increase, would still not compensate for the effects on the victims and families, especially in severe cases of injury or death.

B. *Duplications of other provisions* The victim might be confused on the right to claim under no-fault liability as opposed to fault-based systems, causing delays in compensation claims.

C. *Awareness and Accessibility* Many victims remain unaware of the provisions under Chapter X, particularly in rural areas, resulting in underutilization of these benefits.
Potential for Misuse

Case Laws Illustrating No-Fault Liability

a). Manjula Devi Bhuta v. Manjusri Raha (AIR 1968 MP 1)

Highlighted the social welfare objective of no-fault liability, emphasizing the need for immediate relief over prolonged litigation.

b). National Insurance Co. Ltd. v. Shiv Dutt Sharma (2004)

Reiterated that compensation under no-fault liability does not disentitle a claimant from claiming further remedies.

c). Khenyei v. New India Assurance Co. Ltd. (2015)

Emphasized the fact that provisions of no-fault liability are enacted to protect the interest of the victims and fast-track recovery of compensation.

Improvement Recommendations

- ➔ Periodic review to compensate for inflation and changes in the economy .
- ➔ Awareness activities
- ➔ Educate

- ➔ Sensitize the public on their rights within Chapter X.
- ➔ Improved Surveillance
- ➔ Apply technology on claims, where fraudulent applications will be checked.
- ➔ Insurance Measures
- ➔ No-fault liability provisions should form part of insurance so compensation follows without resistance.

Chapter X of the Motor Vehicles Act, 2019 is a progressive approach toward accident compensation through no-fault liability. It has been instrumental in providing instant financial relief, but there is a need for further reforms and awareness measures to maximize its efficacy. It is a cornerstone of India's road safety framework balancing legal simplicity with victim-centric justice.

मोटर वाहन (संशोधन) अधिनियम, 2019 का अध्याय IV यातायात नियंत्रण और मोटर वाहनों से संबंधित अपराधों के विनियमन, साथ ही उनके लिए दंड निर्धारित करने पर केंद्रित है। यह अध्याय सड़क सुरक्षा को बढ़ाने, यातायात नियमों के उल्लंघन को कम करने, और अपराधियों को उचित दंड देने के उद्देश्य से बनाया गया है। यह 1988 के मोटर वाहन अधिनियम की विभिन्न धाराओं में संशोधन करता है और यातायात कानूनों के अनुपालन में सुधार के लिए कड़े प्रावधान पेश करता है।

महत्वपूर्ण प्रावधान और संशोधन

1.1. बढ़े हुए जुर्माने और दंड

अध्याय IV का एक प्रमुख पहलू अधिकांश यातायात उल्लंघनों के लिए जुर्माने और दंड में वृद्धि है। इसका उद्देश्य यातायात नियमों के उल्लंघन को अधिक महंगा बनाना और तेज़ी से गाड़ी चलाने को हतोत्साहित करना है।

अपराध	जुर्माना (पहले)	जुर्माना (अब)
गति सीमा पार करना	₹400-₹500	₹1,000-₹2,000
नशे में वाहन चलाना	₹2,000	₹10,000, लाइसेंस निलंबित

हेलमेट नहीं पहनना	₹100	₹1,000
क्षमता से अधिक सवारी करना	प्रति अतिरिक्त सवारी ₹100	प्रति अतिरिक्त सवारी ₹1,000

1.2. किशोर अपराधियों के लिए सख्त नियम

यदि कोई किशोर यातायात अपराध करता है, तो वाहन मालिक या अभिभावक पर जुर्माना और कारावास का प्रावधान है।

- बच्चे द्वारा वाहन चलाने पर वाहन पंजीकरण रद्द किया जाएगा।
- अभिभावक को जिम्मेदार ठहराया जाएगा।

1.3. ड्राइविंग लाइसेंस और परमिट

सही ड्राइविंग लाइसेंस रखना अनिवार्य बना दिया गया है। इसके लिए लाइसेंसों का राष्ट्रीय रजिस्टर स्थापित किया गया है।

- वाणिज्यिक ड्राइवर परमिट की अधिक सख्त जांच।
- मेडिकल फिटनेस और प्रशिक्षण पर नियमित निगरानी।

---

2. यातायात अपराध और उल्लंघन

2.1. खतरनाक ड्राइविंग

लापरवाह और खतरनाक ड्राइविंग अब गैर-जमानती अपराध हैं।

- गंभीर चोट या मृत्यु का कारण बनने वाले चालकों को भारी दंड और जेल हो सकती है।

2.2. मोबाइल फोन का उपयोग

वाहन चलाते समय मोबाइल का उपयोग बिना हैंड्स-फ्री सेट के अपराध माना जाएगा।

- जुर्माना: ₹5,000।

2.3. नशे में ड्राइविंग

- पहली बार अपराध: ₹10,000 या 6 महीने की जेल।
- दूसरी बार अपराध: ₹15,000 या 1 वर्ष की जेल।

- ड्राइविंग लाइसेंस 6 महीने के लिए निलंबित।

2.4. वाहन प्रदूषण

- वाहन प्रदूषण मानकों का पालन अनिवार्य।
- बिना वैध पीयूसी (प्रदूषण नियंत्रण प्रमाणपत्र) के वाहन चलाने पर ₹1,000 जुर्माना।

2.5. सीट बेल्ट का उपयोग न करना

- चालक और सवारी दोनों पर लागू।
- जुर्माना: ₹1,000।

2.6. पार्किंग उल्लंघन

- गैर-अधिकृत पार्किंग के लिए जुर्माना: ₹2,000।

---

3. अच्छे नागरिकों **(Good Samaritans)** का संरक्षण

यह प्रावधान उन लोगों की सुरक्षा करता है जो दुर्घटना पीड़ितों की मदद करते हैं।

- अच्छे नागरिकों पर किसी भी कानूनी कार्रवाई के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जाएगा यदि वे सद्भावना से काम करते हैं।

---

4. प्रौद्योगिकी का एकीकरण और यातायात प्रबंधन

4.1. ई-चालान का परिचय

- ई-चालान के माध्यम से उल्लंघनों का इलेक्ट्रॉनिक चालान जारी किया जाएगा।
- जुर्माने की सूचना मोबाइल या ईमेल पर दी जाएगी।

4.2. निगरानी और सीसीटीवी का उपयोग

- सीसीटीवी कैमरों द्वारा उल्लंघनों की निगरानी और स्वचालित डेटा अपलोड।

---

5. सड़क सुरक्षा उपाय

5.1. सड़क सुरक्षा ऑडिट

- दुर्घटना-प्रवण क्षेत्रों की पहचान और सुधारात्मक उपाय।

5.2. प्रशिक्षण और जागरूकता कार्यक्रम

- चालक और परिचालकों के लिए सड़क सुरक्षा, सुरक्षात्मक ड्राइविंग और प्राथमिक चिकित्सा पर प्रशिक्षण अनिवार्य।

अपराध	जुर्माना/दंड
गति सीमा पार करना	₹1,000-₹2,000
नशे में ड्राइविंग	₹10,000 या 6 महीने की जेल
हेलमेट नहीं पहनना	₹1,000
क्षमता से अधिक सवारी करना	प्रति अतिरिक्त सवारी ₹1,000
वाहन प्रदूषण	₹1,000 (बिना वैध पीयूसी)
सीट बेल्ट नहीं पहनना	₹1,000
गैर-अधिकृत पार्किंग	₹2,000

7. चुनौतियां और विचार

- तकनीकी कार्यान्वयन: ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीक की अनुपलब्धता के कारण चुनौतियां।
- जागरूकता की कमी: उपयोगकर्ताओं को नए दंड और उनके परिणामों की जानकारी नहीं।
- प्रवर्तन में असंगति: राज्यों के बीच समन्वय की आवश्यकता।

यह अध्याय भारतीय सड़कों पर यातायात अपराधों और सड़क सुरक्षा के लिए कड़े नियम लागू करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

दोष-रहित दायित्व (No-Fault Liability) पर आधारित प्रमुख न्यायिक निर्णय

(a) मंजीला देवी भुता बनाम मंजुश्री राहा (AIR 1968 MP 1):
यह निर्णय सामाजिक कल्याण के उद्देश्य को उजागर करता है, जहां दोष-रहित दायित्व के माध्यम से पीड़ित को तत्काल राहत प्रदान करने को महत्व दिया गया है, न कि लंबे समय तक चलने वाले मुकदमों को।

(b) नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम शिव दत्त शर्मा (2004):
इस मामले में यह स्पष्ट किया गया कि दोष-रहित दायित्व के तहत प्राप्त मुआवजा, दावेदार को अन्य उपचारों के लिए दावा करने से वंचित नहीं करता।

(c) खन्येई बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (2015):
इस मामले में यह रेखांकित किया गया कि दोष-रहित दायित्व की धाराएं पीड़ितों के हितों की रक्षा और मुआवजे की त्वरित प्राप्ति सुनिश्चित करने के लिए बनाई गई हैं।

सुधार हेतु अनुशंसाएं

1. मुद्रास्फीति और आर्थिक परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर समीक्षा:
   मुआवजा राशि में वृद्धि के लिए नियमित संशोधन।
2. जागरूकता गतिविधियां:
   - जनता को अध्याय X के प्रावधानों और उनके अधिकारों के बारे में शिक्षित करना।
   - पीड़ितों और उनके परिवारों को जागरूक बनाना।
3. सुधारित निगरानी:
   - तकनीक का उपयोग करते हुए, दावों की निगरानी और धोखाधड़ी की संभावना को रोकना।
4. बीमा उपाय:
   - दोष-रहित दायित्व को बीमा योजनाओं का अनिवार्य हिस्सा बनाना ताकि मुआवजा विवाद रहित रूप से प्रदान किया जा सके।

निष्कर्ष:
मोटर वाहन अधिनियम, 2019 का अध्याय X, दोष-रहित दायित्व के माध्यम से दुर्घटना मुआवजे का

एक प्रगतिशील दृष्टिकोण है। यह पीड़ितों को त्वरित वित्तीय सहायता प्रदान करने में सहायक रहा है, लेकिन इसकी प्रभावशीलता को अधिकतम करने के लिए और सुधार और जागरूकता उपायों की आवश्यकता है। यह भारत के सड़क सुरक्षा ढांचे का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो कानूनी सादगी और पीड़ित-केंद्रित न्याय के बीच संतुलन स्थापित करता है।

CHAPTER XI

Chapter XI ensures that every motor vehicle owner has third-party insurance to protect victims of road accidents from financial hardships. This chapter mandates compulsory insurance and lays out rules for liability and claims arising from third-party risks.

Section Provision Explanation
Section 145 Definitions Defines important terms like "third party," "liability," and "authorized insurer."
Section 146 Necessity for insurance against third-party risk Mandates every motor vehicle to have insurance covering third-party risks.
Section 147 Requirements of policies and limits of liability Specifies the minimum coverage for third-party insurance, including death, injury, or property damage.
Section 148 Validity of policies Covers the duration of the policy and ensures its enforceability.
Section 149 Duty of insurers to satisfy judgments and awards Requires insurers to honor court judgments or tribunal awards against the insured.
Section 150 Rights of third parties against insurers on insolvency of the insured Allows third parties to claim directly from insurers if the insured becomes insolvent.

Section 151 Duty to give information regarding insurance Obliges the insured to provide details about the insurance policy to authorities or claimants.
Section 152 Settlement between insurers and claimants Allows settlements through negotiation or alternative dispute resolution methods.
Section 153 Effect of certificate of insurance Makes the insurance certificate admissible as evidence in legal proceedings.
Section 154 Transfer of certificates of insurance Allows the transfer of insurance policies in case of vehicle ownership change.
Section 155 Effect of death of person insured Insurance policy remains effective even after the death of the insured for claims arising before their death.
Section 156 Fraudulent claims Prohibits fraudulent claims and prescribes penalties. remake this table to be fit in spreadsheet.

Salient Features of Chapter XI

1. Mandatory Third-Party Insurance
    - It is illegal to drive a motor vehicle without valid third-party insurance under Section 146.
2. Comprehensive Liability Coverage
    - The insurance policy covers death, injury, or property damage to third parties caused by the insured vehicle.
3. Protection of Third-Party Rights
    - Insurers are legally bound to compensate victims or their families as per the tribunal's awards or judgments under Section 149.
4. Simplified Claims Process
    - Insurance companies must settle claims promptly, either through tribunals or mutual agreements.

5. Direct Claims
    - Third parties can claim directly from the insurer in cases of insolvency of the insured, ensuring uninterrupted compensation.

Amendments in 2019

1. Enhanced Compensation Limits
    - Insurance now mandates higher compensation limits for third-party liability.
2. Technology Integration
    - Digitization of insurance records for easy verification and claims processing.
3. Penalty for Non-Compliance
    - Higher fines for driving without valid third-party insurance.
4. Transparency in Settlements
    - Simplified claim settlement processes with alternative dispute resolution mechanisms.

अधिकार अध्याय XI: मोटर वाहन अधिनियम - तृतीय-पक्ष बीमा

धारा	प्रावधान	व्याख्या
धारा 145	परिभाषाएँ	"तृतीय पक्ष", "दायित्व" और "अधिकृत बीमाकर्ता" जैसे महत्वपूर्ण शब्दों की परिभाषा देती है।
धारा 146	तृतीय-पक्ष जोखिम के खिलाफ बीमा की आवश्यकता	प्रत्येक मोटर वाहन के लिए तृतीय-पक्ष जोखिम को कवर करने वाले बीमा की अनिवार्यता।

धारा 147	नीतियों की आवश्यकताएँ और दायित्व की सीमाएँ	तृतीय-पक्ष बीमा के लिए न्यूनतम कवरेज, जिसमें मृत्यु, चोट या संपत्ति क्षति शामिल है, को निर्दिष्ट करती है।
धारा 148	नीतियों की वैधता	नीति की अवधि को कवर करती है और इसकी लागूता सुनिश्चित करती है।
धारा 149	बीमाकर्ताओं का न्यायनिर्णयों और पुरस्कारों को पूरा करने का दायित्व	बीमाकर्ताओं को यह सुनिश्चित करने की आवश्यकता है कि वे न्यायालय के निर्णय या न्यायाधिकरण के पुरस्कारों का पालन करें।
धारा 150	बीमित के दिवालिया होने पर तृतीय पक्ष के अधिकार	यदि बीमित दिवालिया हो जाता है, तो तृतीय पक्ष सीधे बीमाकर्ता से दावा कर सकता है।
धारा 151	बीमा के संबंध में जानकारी देने का दायित्व	बीमित को अधिकारियों या दावा करने वालों को बीमा पॉलिसी के बारे में जानकारी देने की आवश्यकता होती है।
धारा 152	बीमाकर्ता और दावेदारों के बीच समझौता	समझौते के माध्यम से या वैकल्पिक विवाद समाधान विधियों द्वारा समझौते की अनुमति देती है।
धारा 153	बीमा प्रमाणपत्र का प्रभाव	बीमा प्रमाणपत्र को कानूनी प्रक्रियाओं में प्रमाण के रूप में स्वीकार्य बनाती है।

धारा 154	बीमा प्रमाणपत्र का हस्तांतरण	वाहन स्वामित्व परिवर्तन की स्थिति में बीमा पॉलिसी के हस्तांतरण की अनुमति देती है।
धारा 155	बीमित व्यक्ति की मृत्यु का प्रभाव	बीमा पॉलिसी उस समय की दावों के लिए बीमित व्यक्ति की मृत्यु के बाद भी प्रभावी रहती है।
धारा 156	धोखाधड़ी वाले दावे	धोखाधड़ी वाले दावों को प्रतिबंधित करती है और दंड का प्रावधान करती है।

अधिकार अध्याय XI के प्रमुख विशेषताएँ:

- अनिवार्य तृतीय-पक्ष बीमा: धारा 146 के तहत बिना वैध तृतीय-पक्ष बीमा के वाहन चलाना अवैध है।
- व्यापक दायित्व कवरेज: बीमा पॉलिसी तृतीय पक्ष को होने वाली मृत्यु, चोट या संपत्ति क्षति को कवर करती है।
- तृतीय पक्ष के अधिकारों का संरक्षण: बीमाकर्ताओं को न्यायाधिकरण के पुरस्कारों या न्यायालय के निर्णयों के अनुसार तृतीय पक्षों को मुआवजा देने का दायित्व होता है।
- सरल दावा प्रक्रिया: बीमा कंपनियों को त्वरित रूप से दावे निपटाने होते हैं, चाहे वह न्यायाधिकरण के माध्यम से हो या आपसी समझौते से।
- सीधे दावे: यदि बीमित दिवालिया हो जाता है, तो तृतीय पक्ष सीधे बीमाकर्ता से मुआवजा प्राप्त कर सकता है।

2019 में संशोधन:

- बढ़ी हुई मुआवजा सीमा: बीमा अब तृतीय-पक्ष दायित्व के लिए उच्च मुआवजा सीमा को अनिवार्य करता है।
- प्रौद्योगिकी का एकीकरण: बीमा रिकॉर्ड को डिजिटल रूप में संग्रहित किया गया है ताकि सत्यापन और दावा प्रक्रिया आसान हो सके।

- अवधारित दंड: वैध तृतीय-पक्ष बीमा के बिना वाहन चलाने पर उच्च जुर्माने का प्रावधान किया गया है।
- समझौता प्रक्रिया में पारदर्शिता: वैकल्पिक विवाद समाधान विधियों के माध्यम से सरल दावा निपटान प्रक्रिया।

आलोचनाएँ और चुनौतियाँ:

- अधीन बीमा: कई वाहन मालिक न्यूनतम दायित्व कवरेज का चुनाव करते हैं, जो गंभीर दुर्घटनाओं के लिए अपर्याप्त हो सकता है।
- जागरूकता की कमी: अनिवार्य बीमा की आवश्यकताओं के बारे में जन जागरूकता की कमी के कारण अनुपालन कम होता है।
- दावा निपटान में देरी: प्रावधानों के बावजूद, कानूनी और प्रक्रियात्मक अड़चनों के कारण दावा निपटान में देरी होती है।
- धोखाधड़ी वाले दावे: धोखाधड़ी वाले दावे प्रणाली को कमजोर करते हैं और बीमाकर्ताओं और ईमानदार पॉलिसीधारकों के लिए लागत बढ़ाते हैं।

Criticisms and Challenges

1. Underinsurance
    - Many vehicle owners opt for minimum liability coverage, which may not be adequate for severe accidents.
2. Awareness
    - Lack of public knowledge about mandatory insurance requirements leads to low compliance.
3. Delays in Settlements
    - Despite provisions, claim settlements can be delayed due to legal and procedural hurdles.
4. Fraudulent Claims
    - Cases of fraudulent claims undermine the system and increase costs for insurers and honest policyholders.

आलोचनाएँ और चुनौतियाँ

1. अधीन बीमा (Underinsurance)
   कई वाहन मालिक न्यूनतम दायित्व कवरेज का चुनाव करते हैं, जो गंभीर दुर्घटनाओं के लिए अपर्याप्त हो सकता है।
2. जागरूकता की कमी (Awareness)
   अनिवार्य बीमा की आवश्यकताओं के बारे में सार्वजनिक जानकारी की कमी के कारण अनुपालन में कमी होती है।
3. दावे के निपटान में देरी (Delays in Settlements)
   प्रावधानों के बावजूद, कानूनी और प्रक्रियात्मक अड़चनों के कारण दावे के निपटान में देरी होती है।
4. धोखाधड़ी वाले दावे (Fraudulent Claims)
   धोखाधड़ी वाले दावे प्रणाली को कमजोर करते हैं और बीमाकर्ताओं और ईमानदार पॉलिसीधारकों के लिए लागत बढ़ाते हैं।

CHAPTER XII

Section	Provision	Explanation
Section 165	Claims Tribunals	Empowers state governments to set up Motor Accident Claims Tribunals (MACTs) for adjudicating accident claims.
Section 166	Application for compensation	Specifies how victims or their families can apply for compensation from MACTs.
Section 167	Option regarding claims	Allows victims to claim compensation under either the Motor Vehicles Act or Workmen's Compensation Act, but not both.
Section 168	Award of Claims Tribunals	Empowers MACTs to determine the amount of compensation and direct insurers or owners to pay.
Section 169	Procedure and powers of Claims Tribunals	Specifies procedural rules for MACTs, including powers similar to those of civil courts.
Section 170	Impleading insurer in certain cases	Allows insurers to be added as parties in specific cases to ensure fair adjudication.

Salient Features of Chapter XII

1. Specialized Tribunals
    - MACTs ensure faster resolution of accident claims by focusing solely on motor accident cases.
2. Procedural Simplicity
    - Victims can file claims directly in MACTs without the complexities of civil litigation.
3. Fair Adjudication
    - MACTs have the authority to decide compensation based on fault, severity of injury, and loss incurred.
4. Dual Option
    - Victims can choose between remedies under the Motor Vehicles Act and the Workmen's Compensation Act.
5. Direct Awards
    - MACTs can directly order insurers or owners to pay compensation, ensuring timely relief to victims

Amendments in 2019

1. Higher Compensation
    - The 2019 amendment increased the compensation limits and made provisions for interim relief to victims.
2. Fast-Track Mechanisms
    - Streamlined procedures for quicker adjudication and reduced pendency of cases.
3. Digital Integration
    - Use of technology to file claims and track case progress in MACTs.

Criticisms and Challenges

1. Pendency of Cases
    - Many MACTs face backlogs due to the high volume of claims.
2. Disparity in Awards
    - Lack of standardization in compensation awards leads to inconsistencies.
3. Insurer Involvement
    - Delays often occur due to disputes between insurers and claimants over liability and quantum of compensation.

अधिकार अध्याय XII: मोटर दुर्घटना दावा न्यायाधिकरण (MACT)

धारा	प्रावधान	व्याख्या
धारा 165	दावा न्यायाधिकरण	राज्य सरकारों को मोटर दुर्घटना दावा न्यायाधिकरण (MACT) स्थापित करने का अधिकार देती है, ताकि दुर्घटना दावों का निपटान किया जा सके।
धारा 166	मुआवजे के लिए आवेदन	निर्दिष्ट करती है कि पीड़ित या उनके परिवार MACT से मुआवजे के लिए कैसे आवेदन कर सकते हैं।
धारा 167	दावा के विकल्प	पीड़ितों को मोटर वाहन अधिनियम या श्रमिकों के मुआवजा अधिनियम के तहत मुआवजा प्राप्त करने का विकल्प देती है, लेकिन दोनों का दावा नहीं कर सकते।

धारा 168	दावा न्यायाधिकरण का पुरस्कार	MACT को मुआवजे की राशि निर्धारित करने और बीमाकर्ताओं या मालिकों को भुगतान करने का आदेश देने का अधिकार देती है।
धारा 169	दावा न्यायाधिकरण की प्रक्रिया और शक्तियाँ	MACT की प्रक्रिया और शक्तियों को निर्दिष्ट करती है, जिसमें न्यायालयों की तरह शक्तियाँ होती हैं।
धारा 170	कुछ मामलों में बीमाकर्ता को शामिल करना	विशिष्ट मामलों में बीमाकर्ताओं को पार्टी के रूप में जोड़ने का अधिकार देती है ताकि निष्पक्ष निपटान हो सके।

अधिकार अध्याय XII की प्रमुख विशेषताएँ:

1. विशेषज्ञ न्यायाधिकरण (Specialized Tribunals):
   MACTs केवल मोटर दुर्घटना मामलों पर ध्यान केंद्रित करती हैं, जिससे त्वरित निपटान सुनिश्चित होता है।
2. प्रक्रियात्मक सरलता (Procedural Simplicity):
   पीड़ितों को MACT में सीधे दावा दर्ज करने का अवसर मिलता है, जिससे नागरिक मुकदमेबाजी की जटिलताओं से बचा जा सकता है।
3. निष्पक्ष निपटान (Fair Adjudication):
   MACT को मुआवजा तय करने का अधिकार होता है, जो गलती, चोट की गंभीरता, और हुए नुकसान पर आधारित होता है।
4. दोहरी विकल्प (Dual Option):
   पीड़ितों को मोटर वाहन अधिनियम और श्रमिकों के मुआवजा अधिनियम के तहत उपचार के विकल्प होते हैं।
5. सीधे पुरस्कार (Direct Awards):
   MACT सीधे बीमाकर्ताओं या मालिकों को मुआवजा देने का आदेश देती है, जिससे पीड़ितों को समय पर राहत मिलती है।

2019 में संशोधन:

1. उच्च मुआवजा (Higher Compensation):
   2019 के संशोधन में मुआवजे की सीमा बढ़ाई गई और पीड़ितों के लिए अंतरिम राहत की व्यवस्था की गई।
2. त्वरित तंत्र (Fast-Track Mechanisms):
   मामलों का त्वरित निपटान करने के लिए प्रक्रियाओं को सरल बनाया गया और मामलों की लंबितता को कम किया गया।
3. डिजिटल एकीकरण (Digital Integration):
   MACT में दावे दायर करने और मामले की प्रगति को ट्रैक करने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग किया गया।

आलोचनाएँ और चुनौतियाँ:

1. मामलों का लंबित होना (Pendency of Cases):
   कई MACTs को उच्च दावों की मात्रा के कारण बैकलॉग का सामना करना पड़ता है।
2. पुरस्कारों में असमानता (Disparity in Awards):
   मुआवजे के पुरस्कारों में मानकीकरण की कमी के कारण असंगतताएँ होती हैं।
3. बीमाकर्ता का शामिल होना (Insurer Involvement):
   कभी-कभी बीमाकर्ता और दावा करने वालों के बीच जिम्मेदारी और मुआवजे की राशि पर विवादों के कारण देरी होती है।

CHAPTER XIII

Chapter XIII of the Motor Vehicles Act focuses on offences, penalties, and the procedural framework for handling violations related to motor vehicles. This chapter has been significantly strengthened by the 2019 amendments to ensure road safety, deter traffic violations, and promote responsible driving.

Key Objectives of Chapter XIII

1. Enhance Road Safety: Ensure stricter enforcement of traffic rules and discourage violations through heavy penalties.
2. Deterrence: Impose stringent penalties for repeat offenders to prevent accidents and reckless behavior.
3. Technology Integration: Enable electronic enforcement to streamline the detection and punishment of violations.
4. Public Accountability: Encourage responsible behavior among drivers, vehicle owners, and authorities.

Section	Provision	Explanation
Section 177	General provision for punishment of offences	Imposes fines for general offences under the Act not specifically covered elsewhere.
Section 178	Penalty for travelling without a ticket	Fine for passengers traveling without a valid ticket in transport vehicles.
Section 179	Disobedience of orders, obstruction, and refusal to provide information	Penalizes refusal to provide necessary information to authorities or disobedience of lawful directions.
Section 180	Allowing unauthorized persons to drive vehicles	Penalizes vehicle owners who permit unauthorized individuals to drive their vehicles.
Section 181	Driving without a valid license	Imposes fines or imprisonment for driving without a valid license.
Section 182	Driving vehicles in contravention of conditions of the license	Penalizes driving a vehicle against the terms of its registration or license conditions.

Section 183	Penalty for over-speeding	Imposes fines and other penalties for exceeding speed limits.
Section 184	Dangerous driving	Imposes penalties for driving dangerously, endangering life or property.
Section 185	Driving under the influence of alcohol or drugs	Penalizes driving while intoxicated, including fines and imprisonment.
Section 186	Penalty for driving when physically or mentally unfit	Penalizes driving by individuals unfit to drive due to physical or mental incapacity.
Section 187	Penalty for causing nuisance and obstruction to public	Imposes fines for creating public inconvenience or causing obstruction on roads.
Section 188	Penalty for offences related to construction and maintenance of vehicles	Penalizes manufacturers or owners for using or constructing vehicles that do not meet safety standards.
Section 190	Penalty for using vehicles in unsafe condition	Fines for operating vehicles in a dangerous condition, unfit for road use.
Section 194	Penalty for driving vehicles exceeding permissible weight	Penalizes vehicles carrying loads beyond permissible limits.
Section 197	Liability of drivers and owners for offenses	Ensures drivers and vehicle owners are accountable for offences involving their vehicles.
Section 198	Penalty for unauthorized interference with vehicles	Penalizes tampering with vehicle parts or systems without authorization.

Salient Features of Chapter XIII

1. Higher Penalties for Traffic Violations
    - The 2019 amendments significantly increased fines for offences such as over-speeding, drunk driving, and driving without a license.
2. Focus on Repeat Offenders
    - Stricter penalties for individuals who commit the same offence multiple times.
3. Introduction of Technology

- Use of automated enforcement systems like cameras and sensors to detect offences.

4. Accountability of Vehicle Owners
    - Owners are held responsible for offences committed with their vehicles, especially if they permitted unauthorized driving.

अधिकार अध्याय XIII: मोटर वाहन अधिनियम के तहत अपराध, दंड और प्रक्रिया

अधिकार अध्याय XIII मोटर वाहन अधिनियम में मोटर वाहन से संबंधित उल्लंघनों के अपराधों, दंड और प्रक्रिया से संबंधित प्रावधानों पर केंद्रित है। इस अध्याय को 2019 के संशोधनों से महत्वपूर्ण रूप से सशक्त किया गया है, ताकि सड़क सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके, यातायात उल्लंघनों को रोका जा सके और जिम्मेदार ड्राइविंग को बढ़ावा दिया जा सके।

अधिकार अध्याय XIII के मुख्य उद्देश्य:

1. सड़क सुरक्षा को बढ़ाना (Enhance Road Safety):
   यातायात नियमों को कड़ाई से लागू करना और भारी जुर्माना लगाने के माध्यम से उल्लंघनों को रोकना।
2. निवारण (Deterrence):
   पुनरावृत्ति करने वाले अपराधियों पर कड़ी सजा लगाकर दुर्घटनाओं और लापरवाह व्यवहार को रोकना।
3. प्रौद्योगिकी का एकीकरण (Technology Integration):
   उल्लंघनों का पता लगाने और दंडित करने के लिए इलेक्ट्रॉनिक प्रवर्तन की अनुमति देना।
4. सार्वजनिक जवाबदेही (Public Accountability):
   ड्राइवरों, वाहन मालिकों और अधिकारियों के बीच जिम्मेदार व्यवहार को बढ़ावा देना।

अधिकार अध्याय XIII के प्रावधान:

धारा	प्रावधान	व्याख्या
धारा 177	अपराधों की सामान्य सजा	अधिनियम के तहत सामान्य अपराधों के लिए जुर्माना, जिन्हें अन्यथा विशेष रूप से निर्दिष्ट नहीं किया गया है।
धारा 178	टिकट के बिना यात्रा करने पर दंड	परिवहन वाहनों में बिना वैध टिकट के यात्रा करने पर जुर्माना।
धारा 179	आदेशों की अवज्ञा, विघ्न और जानकारी देने से इनकार	अधिकारियों को आवश्यक जानकारी न देने या वैध आदेशों की अवज्ञा करने पर दंड।
धारा 180	अनधिकृत व्यक्तियों को वाहन चलाने की अनुमति देने पर दंड	वाहन मालिकों को दंडित करता है जो अनधिकृत व्यक्तियों को अपने वाहन चलाने की अनुमति देते हैं।
धारा 181	बिना वैध लाइसेंस के वाहन चलाने पर दंड	बिना वैध लाइसेंस के वाहन चलाने पर जुर्माना या कारावास।
धारा 182	लाइसेंस की शर्तों का उल्लंघन कर वाहन चलाने पर दंड	पंजीकरण या लाइसेंस की शर्तों के विपरीत वाहन चलाने पर दंड।
धारा 183	ओवरस्पीडिंग पर दंड	गति सीमा से अधिक गति से वाहन चलाने पर जुर्माना और अन्य दंड।

धारा 184	खतरनाक ड्राइविंग पर दंड	खतरनाक तरीके से वाहन चलाने पर दंड, जिससे जीवन या संपत्ति को खतरा हो।
धारा 185	शराब या ड्रग्स के प्रभाव में वाहन चलाने पर दंड	नशे की हालत में वाहन चलाने पर जुर्माना और कारावास।
धारा 186	शारीरिक या मानसिक रूप से अपात्र व्यक्तियों द्वारा वाहन चलाने पर दंड	शारीरिक या मानसिक अक्षमता के कारण वाहन चलाने पर दंड।
धारा 187	सार्वजनिक विघ्न और बाधा उत्पन्न करने पर दंड	सड़क पर सार्वजनिक असुविधा या बाधा उत्पन्न करने पर जुर्माना।
धारा 188	वाहन निर्माण और रख-रखाव से संबंधित अपराधों पर दंड	सुरक्षा मानकों के अनुरूप न वाहन निर्माण करने या उनका उपयोग करने पर दंड।
धारा 190	असुरक्षित स्थिति में वाहन चलाने पर दंड	खतरनाक स्थिति में वाहन चलाने पर जुर्माना।
धारा 194	अनुमति से अधिक वजन वाले वाहन चलाने पर दंड	अनुमत सीमा से अधिक वजन लेकर वाहन चलाने पर दंड।
धारा 197	अपराधों के लिए ड्राइवरों और मालिकों की जिम्मेदारी	वाहन से संबंधित अपराधों के लिए ड्राइवरों और मालिकों को जिम्मेदार ठहराता है।

धारा 198	अनधिकृत रूप से वाहनों में हस्तक्षेप करने पर दंड	वाहन के भागों या प्रणालियों में अनधिकृत रूप से हस्तक्षेप करने पर दंड।

अधिकार अध्याय XIII की प्रमुख विशेषताएँ:

1. यातायात उल्लंघनों पर उच्च दंड (Higher Penalties for Traffic Violations):
   2019 के संशोधन में ओवरस्पीडिंग, शराब पीकर गाड़ी चलाने और बिना लाइसेंस के गाड़ी चलाने जैसे अपराधों पर जुर्माना बढ़ा दिया गया।
2. पुनरावृत्ति अपराधियों पर ध्यान (Focus on Repeat Offenders):
   उन व्यक्तियों के लिए कड़ी सजा, जो बार-बार वही अपराध करते हैं।
3. प्रौद्योगिकी का परिचय (Introduction of Technology):
   उल्लंघनों का पता लगाने के लिए स्वचालित प्रवर्तन प्रणाली जैसे कैमरे और सेंसर का उपयोग किया गया है।
4. वाहन मालिकों की जवाबदेही (Accountability of Vehicle Owners):
   वाहन मालिकों को उनके वाहनों से संबंधित अपराधों के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है, विशेष रूप से जब उन्होंने अनधिकृत ड्राइविंग की अनुमति दी हो।

Amendments Introduced in 2019

1. Enhanced Penalty Structure
   - Penalties for various offences have been substantially increased to deter violations. For instance:
     - Over-speeding (Section 183): ₹1,000-₹2,000 (previously ₹400).
     - Drunk driving (Section 185): ₹10,000 and/or imprisonment up to 6 months (previously ₹2,000).
2. Stringent Penalties for Manufacturers

- Section 188 penalizes vehicle manufacturers for failing to meet safety or environmental standards.

3. Electronic Monitoring
    - Integration of electronic devices for traffic enforcement, ensuring accurate and efficient detection of violations.
4. New Offences
    - Offences such as not providing a way to emergency vehicles and obstructing ambulances have been added.

Analysis of Major Offences

1. Driving Under the Influence (Section 185)

- Provision: Penalizes drivers with blood alcohol levels exceeding the prescribed limit or under the influence of drugs.
- Penalty: ₹10,000 fine or imprisonment up to 6 months for the first offence; higher penalties for subsequent offences.

2. Over-Speeding (Section 183)

- Provision: Drivers exceeding speed limits are fined based on the severity of the offence.
- Penalty: ₹1,000 for light motor vehicles; ₹2,000 for medium and heavy motor vehicles.

3. Dangerous Driving (Section 184)

- Provision: Includes reckless driving, red-light jumping, and overtaking dangerously.
- Penalty: Fine up to ₹5,000 and/or imprisonment up to 1 year.

4. Driving Without a License (Section 181)

- Provision: Criminalizes driving without a valid license.
- Penalty: ₹5,000 fine and/or imprisonment up to 3 months.

5. Unauthorized Use of Vehicles (Section 180)

- Provision: Penalizes owners who allow unlicensed individuals to drive their vehicles.
- Penalty: ₹5,000 fine and/or imprisonment up to 3 months.

Criticisms of Chapter XIII

1. Excessive Penalties
    - Critics argue that the higher fines disproportionately impact economically weaker sections.
2. Implementation Challenges
    - Insufficient infrastructure and manpower hinder effective enforcement, especially in rural areas.
3. Potential for Corruption
    - Increased fines may lead to more opportunities for bribes and corruption among enforcement officials.
4. Resistance from Drivers
    - Many drivers and transport unions protested against the amended provisions, citing financial burdens and operational challenges.

Suggestions for Improvement

1. Public Awareness Campaigns
    - Educate drivers about the importance of following traffic rules and the consequences of violations.
2. Gradual Implementation
    - Phase-wise implementation of new penalty structures to allow adaptation by the public.
3. Transparent Enforcement
    - Use technology to minimize manual intervention and reduce corruption.

4. Uniform Application
    - Ensure consistent enforcement of rules across states to avoid regional disparities.

Chapter XIII of the Motor Vehicles Act, 2019 emphasizes stricter enforcement of traffic laws to enhance road safety. The significant increase in penalties underlines the government's commitment to reducing road accidents and promoting responsible driving behavior. However, effective implementation and addressing public concerns are crucial for achieving the chapter's objectives.